भारत सरकार

भारत का विधि आयोग

रिपोर्ट संख्या 274

न्यायालयों की अवमानना अधिनियम, 1971 की समीक्षा

(अधिनियम की धारा 2 तक सीमित)

अप्रैल, 2018

डॉ0 न्यायमूर्ति बलबीर सिंह चौहान
पूर्व न्यायाधीश, सर्वोच्च न्यायालय
अध्यक्ष
भारत का विधि आयोग
विधि एवं न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

सत्यमेव जयते

Dr. Justice B. S. Chauhan
Former Judge, Supreme Court of India
Chairman
Law Commission of India
Ministry of Law & Justice
Government of India

अ.शा.सं.6(3)321/2018-एलसी(लोस) 17 अप्रैल, 2018

प्रिय श्री रवि शंकर प्रसाद जी,

भारत के विधि आयोग को न्याय विभाग से दिनांक 8 मार्च, 2018 को एक संदर्भ प्राप्त हुआ था, जिसमें आयोग को न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 में केवल "जानबूझकर अदालतों के दिशानिर्देशों / निर्णयों पर अदालत की अवज्ञा/ अदालत की अवमानना" की परिभाषा को सीमित करने के संसोधन की समीक्षा प्रारंभिक तारीख में करने के लिये कहा गया था।

आयोग ने न्यायालय की अवमानना से संबंधित विभिन्न मौजूदा संवैधानिक एवं विधिक प्रावधानों, न्यायिक घोषणाओं, अन्तर्राष्ट्रिय परिदृश्य से संबंधित विभिन्न पहलुओं को शामिल कर जांच की है तथा अपनी संतुतियों को रिपोर्ट संख्या 274 में जिसका शीर्षक "न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 की समीक्षा (अधिनियम की धारा 2 तक सीमित)" है सरकार के अवलोकनार्थ प्रस्तुत है।

आयोग इस रिपोर्ट को तैयार करने में सुश्री निधी अरोडा एवं सुश्री प्रीति बडोला, परामर्शदाता के योगदान की भूरी भूरी प्रशंसा करता है।

भवदीय,

डॉ.न्यायमूर्ति बलबीर सिंह चौहान,

श्री रवि शंकर प्रसाद,
माननीय विधि एवं न्याय मंत्री,
विधि एवं न्याय मंत्रालय,
शास्त्री भवन, नई दिल्ली-110015

कमरा सं. 405, चतुर्थ तल, 'बी' विंग, लोक नायक भवन, खान मार्केट, नई दिल्ली-110003 / Room No. 405, 4th Floor, 'B' Wing, Lok Nayak Bhawan, Khan Market, New Delhi-110003
दूरभाष/Tel: 011-24654951, फैक्स/Fax : 24654950 ई-मेल/email : justicechauhan@gmail.com

रिपोर्ट संख्या 274

न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 की समीक्षा

(अधिनियम की धारा 2 तक सीमित)"

विषय - सूची

अध्याय	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
I	**परिचय और संदर्भ**	1-7
	क. भारत में न्यायालय की अवमानना का इतिहास	1-7
	ख. आयोग का संदर्भ	7
II	**मौजूदा प्रावधान**	8-26
	क. "अदालत की अवमानना क्या है"?	8
	ख. संवैधानिक प्रावधान	9-14
	1. रिकॉर्ड अदालतें एवं अवमानना के लिये दण्डित करने की शक्तियां	10
	2. अनुच्छेद 19(1)(क)	12
	3. अन्य संवैधानिक प्रावधान	13
	ग. अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971	15-19
	घ. आपराधि प्रकिया संहिता, 1973	19-20
	ङ. शक्तियों की व्यापकता	20-24
	च. अवमानना के न्यायिक क्षेत्र पर संसद के द्वारा कानून बनाने की शक्ति	25-26
III	**अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य**	27-39
	क. पाकिस्तान	27-29
	ख. इंग्लैण्ड एवं वेल्स	29-30
	ग. संयुक्त राज्य अमेरिका	30-31
IV	**अवमानना पर न्यायिक दृष्टिकोण**	32-39

V	**आपराधिक अवमानना** क. झूटा शपथ पत्र ख. पूर्व स्पष्ट अवमानना ग. अदालत के निर्णयों/आदेशों की गैर अनुपालना अदालत की कार्यवाहियों की गलत व्याख्या करना	40-47 42-44 45-46 46 46-47
VI	**अवमानना की श्रेणी में क्या शामिल नहीं है** क. निर्णय / आदेशों की यदि एक से अधिक व्याख्याऐं की जा सकती हों। ख. यदि आदेशों का कार्यान्वयन संभव नहीं हो। ग. यदि शर्तों के हिसाब से आदेश अस्पष्ट हो। घ. तकनीकि अवमानना	48-51 49 49-50 50 51
VII	**निष्कर्ष एवं अनुसंशाएं** **अनुलग्नक**	52-56 57-59
	I. अनुलग्नक 1: उच्च न्यायालयों में दिनांक 1.07.2016 से 30.06.2017 तक अवमानना (दीवानी एवं आपराधिक) केसों का विवरण II. अनुलग्नक 2: उच्चतम न्यायालय में दिनांक 10.04.2018 तक अवमानना के कुल स्थापित, निपटाए, एवं लम्बित दीवानी एवं आपराधिक केसों का विवरण	57-58 59
	उद्धृत और विचार विमर्श किये गये केसों की सूची	60-64

अध्याय 1

परिचय

क. भारत में न्यायालय की अवमानना का इतिहास

1.1 भारत में अदालतों की अवमानना का इतिहास को आजादी से पूर्व के समय से ही देखा जा सकता है। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत के कई राज्यों पर अपना कब्जा कर लिया, जिसके पश्चात इंग्लैंड के राजा ने 1726 का चार्टर जारी किया जिसके तहत प्रत्येक प्रत्येक प्रेसीडेंसी टाउन में एक निगम की स्थापना की गई। यह चार्टर भारत के कानूनी इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुआ क्योंकि इस के कारण ही भारत में अंग्रेजी कानून की शुरुआत हुई। प्रत्येक प्रेसीडेंसी टाउन में मेयर अदालतें गठित की गईं तथा रिकॉर्ड न्यायालयों को बनाया गया तथा उन न्यायालयों को संबंधित शहर और अधीनस्थ क्षेत्रों के भीतर कानूनी एवं दीवानी मामलों पर निर्णय देने के लिये अधिकृत किया गया।[1]

1.2 इसके बाद, वर्ष 1774 में, फोर्ट विलियम, कलकत्ता में स्थित महापौर की अदालत को विनियमन अधिनियम 1773 के तहत सुप्रीम कोर्ट के द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। मद्रास और बॉम्बे में महापौर के न्यायालयों को समाप्त कर उनके स्थान पर रिकॉर्डर के न्यायालयों की स्थापना की गई तथा बाद में इन्हें भी भारत सरकार अधिनियम, 1800 के तहत सर्वोच्च न्यायालयों द्वारा हटा दिया गया। जबकि मद्रास में सुप्रीम कोर्ट की स्थापना वर्ष 1801 में 1800 के चार्टर द्वारा तथा बॉम्बे में सुप्रीम कोर्ट की स्थापना 1824 में 1823 के चार्टर द्वारा की गई। रिकॉर्डर न्यायालयों और सुप्रीम कोर्टों के पास न्यायालय की अवमानना के संबंध में दंडित करने के लिये वही समान शक्तियां थीं जो कि इंग्लैंड में उच्चतर अदालतों के पास थीं।[2]

---

1 एमपी जैन, "भारतीय कानूनी और संवैधानिक इतिहास की रूपरेखा" देखें (लेक्सिस नेक्सिस; छठा संस्करण (2010) ।

2 न्यायालयों की अवमानना संबंधी समिति की रिपोर्ट, फरवरी 1963। http://dspace.gipe.ac.in/xmlui/handle/10973/33748 पर उपलब्ध (पिछले बार दिनांक 16 अप्रैल, 2018 को देखा गया)।

भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861 के तहत उच्चतम न्यायालयों के बाद उच्च न्यायालयों को रखा गया। तीन उच्च न्यायालयों मद्रास, बाम्बे एवं कलकत्ता के पास अवमानना के मामले में दंडित करने की शक्तियां अन्र्तनिहित थीं।[3] वर्ष 1866 में इलाहबाद उच्च न्यायालय की स्थापना भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861 के तहत की गई तथा इस के पास रिकॉर्ड न्यायालय के साथ साथ अवमानना के मामले में भी दण्ड देने की शक्ति प्राप्त थी।[4]

1.3 सन 1867 में पीकॉक सी.जे. ने अवमानना के मामले में दण्डित करने की शक्ति का विस्तृत रुप से अब्दुल्ला बनाम महताब (उपर्युक्त) मामले में व्याख्या निम्न शब्दों में की है:

"इस बात में किसी भी प्रकार का कोई संदेह नहीं है कि प्रत्येक रिकॉर्ड न्यायालय को अदालत की अवमानना के मामले में सरसरी तौर पर दंण्डित करने का अधिकार है।"

1.4 भारतीय कानूनी रिपोर्ट संख्या 41 कलकत्ता 173, कानूनी अनुस्मारक बनाम मोतीलाल घोष एवं अन्य के मामले में न्यायालय ने यह माना कि न्यायालय की अवमानना के संबंध में न्यायालय के पास दंडित करने की शक्ति "विवेकाधीन, असीमित एवं अनियंत्रित है" और "इसलिये इसका उपयोग बहुत ही सावधानी पूर्वक किया जाना चाहिए क्योंकि इस अधिकार को तब महसूस किया जाएगा जब इस के द्वारा दी जाने वाली सजा असीमित होगी और इस मामले में लगाये जाना वाला आर्थिक दण्ड न्यायाालय के विवेकाधीन शक्तियों को सुरक्षित करेगा और इस संबंध में लगाये जाने वाले दण्ड के विरुद्द किसी भी अदालत में अपील नहीं की जा सकेगी।"

1.5 कलकत्ता उच्च न्यायालय की खण्डपीठ ने उच्च न्यायालय के इस अधिकार क्षेत्र पर 1879 में *मार्टिन* बनाम लॉरेन्स[5] मामले में विचार किया और यह पाया कि -

"न्यायालय का क्षेत्राधिकार जिसके तहत इस प्रक्रिया को जारी किया गया है एक विशेषाधिकार है जो कि न्यायालयों को उच्चतम न्यायालय से विरासत में मिला है तथा इसे क्राऊन के चार्टर द्वारा उन शक्तियों एवं प्रक्रियाओं से सम्मानित किया गया है जो कि तत्कालीन ब्रिटेन के राजा की खण्ड पीठ एवं ग्रेट ब्रिटेन के उच्च न्यायालय को प्राप्त थीं।"

---

3 *पूर्वोक्त*; पुन: *में* भी देखें: *अब्दूल और मेहताब*, (1867) 8 डब्ल्यूआर (सीआर) 32।

4 के बालाशंकरन नायर, "भारत में अदालत की अवमानना कानून" (अटलांटिक प्रकाशक और वितरक) 2004।

5 (1879) आईएलआर 4 कैल 655।

1.6 न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1926 के लागू होने से पहले अधीनस्थ न्यायालयों की अवमानना के संबंध में दिये जाने वाले दण्ड की शक्तियों को लेकर विभिन्न उच्च न्यायालयों की राय में विरोधाभास था। मद्रास एवं बॉम्बे उच्च न्यायालय इस बात पर सहमत थे कि मुंसिफ अदालतों की अवमानना के मामलों पर सजा देने की शक्ति उच्च न्यायालयों के पास है।[6] परन्तु कलकत्ता उच्च न्यायालय का यह मत था कि भारत के उच्च न्यायालयों के पास अधीनस्थ अदालतों की अवमानना के संबंध में वह समान शक्तियां प्राप्त नहीं है जो कि राजा की उच्च न्यायालय को इंग्लैण्ड में प्राप्त हैं।

1.7 सुखदेव सिंह सोढी बनाम मुख्य न्यायधीश श्री एस. तेजा सिंह एवं पेप्सू उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों[7] के मामले में न्यायालय की अवमानना के संबंध में विस्तार से प्रकाश डाला है-

"यह सत्य है कि सन् 1883 में प्रीवी परिषद के कुछ विद्दान न्यायधीशों ने कलकत्ता, बॉम्बे एवं मद्रास उच्च न्यायालयों की शक्तियों को इंग्लैण्ड के कानून के समान ही माना.....परन्तु न्यायिक समितियों के कुछ निणयों से बिल्कुल स्पष्ट है कि उच्च न्यायालों का न्यायधिकारक्षेत्र पहले की तुलना में बहुत विस्तृत हुआ है। परन्तु फिर भी सर बार्नस पीकॉक ने यह स्पष्ट किया है कि आपराधिक संहिता की धारा 5 में शब्द ''कोई अन्य कानून'' तीनों चार्टर उच्च न्यायालयों को अवमानना के मामले में सरसरी तौर पर दंण्डित करने का अधिकार प्रदान नहीं करता है .....स्पष्ट है कि सन् 1853 में आयोजित प्रीवी काऊन्सिल की बैठक में सिएरा लियोन की रिकॉर्ड अदालत को अवमानना के मामले में दण्डित करने की शक्ति इसलिये नहीं थी कि उसे यह शक्ति अंग्रेजी कानून के द्वारा दी गई थी बल्कि उसे यह शक्तियां इसलिये प्राप्त थीं क्यों कि वह एक रिकॉर्ड न्यायालय था.....इलाहबाद उच्च न्यायालय को भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861 के तहत 1866 में स्थापित किया गया था इस प्रकार यह रिकॉर्ड न्यायालय के रुप में भी स्थापित किया गया.....बाद में लाहौर उच्च न्यायालय की स्थापना 1919 में पूर्व तरीके से ही की गई और इसे पूर्ण रुप से रिकॉर्ड अदालत के रुप में स्थापित किया गया।"

---

6 उपर्युक्त नोट 4

7 एआईआर 1954 एससी 186

1.8 न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1926 (इसके पश्चात 1926 अधिनियम के रुप में संदर्भित) भारत में न्यायालय की अवमानना के संदर्भ में प्रथम कानून है। इस अधिनियम की धारा 2 वर्तमान में सभी उच्च न्यायालयों को उनके स्वंय की अवमानना एवं अधीनस्थ अदालतों की अवमानना के संबंध में दण्डित करने की शक्तियां प्रदान करती है। यह अधिनियम उक्त अवमाननाओं के मामले में दिये जाने वाले दण्ड की अधिकतम सीमा को भी निर्धारित करती है।[8]

1.9 सन् 1927 में पांच न्यायधीशों की एक खण्डपीठ ने पूर्वकथित विषय का मुस्लिम ऑऊटलुक, लाहौर[9] के मामले में पुर्नमूल्यांकन किया और अपने एक पुराने मामले क्राऊन बनाम सैयद हबीब[10] के मामले की पुष्टि करते हुए कहा कि अवमानना के मामले में दण्डति करने की शक्ति केवल तीन चार्टड उच्च न्यायालयों के पास न होकर प्राकृतिक रुप से प्रत्येक उच्च न्यायालय के पास है। 1926 के अधिनियम में सन् 1937 में संसोधन कर स्पष्ट किया गया कि अवमानना के मामले में सिर्फ अधीनस्थ अदालतों को ही शक्तियां प्राप्त नहीं है बल्कि सभी अदालतों को है।

1.10 यहां पर ध्यान देने योग्य यह है कि 1926 का अधिनियम केवल पूरे ब्रिटिश भारत में लागू था जबकि राज्य रियासतो जैसे हैदराबाद, राजस्थान, मध्य भारत, सौराष्ट्र, त्रावनकोर-कोच्चिन, सौराष्ट्र और पेप्सू के अपने -अपने अवमानना कानून अलग से थे।

1.11 सन् 1948 में पेप्सू उच्च न्यायालय की स्थापना एक अध्यादेश के द्वारा की गई जिसकी धारा 33 के अनुसार यह एक रिकॉर्ड न्यायालय होगा और इस के पास अवमानना के संबंध में भी दण्ड देने की शक्तियां भी होंगी।

---

8 धारा 3, अधिनियम 1926

9 एआईआर 1927 लाहौर 610

10 (1925) आईएलआर 6 लाहौर 528

1.12 1926 के अधिनियम एवं अन्य रियासतों के कानूनों को निरस्त कर न्यायालयों की अवमानना अधिनियम, 1952 (इस के पश्चात अधिनियम, 1952 के नाम से संदर्भित) से प्रतिस्थापित किया गया जिसने पूर्व के अधिनियम में महत्वपूर्ण बदलाव किये। सबसे पहले उच्च न्यायालय की परिभाषा को सुनिश्चित कर न्यायिक आयुक्त के कार्यालय को शामिल किया गया जिसे अधिनियम, 1926 के कार्यक्षेत्र में शामिल नहीं किया गया था और दूसरा, अब न्यायिक आयुक्तों सहित उच्च न्यायालयों को स्वय और अधीनस्थ अदालतों की अवमानना के मामलों की जांच कराने की शक्ति प्रदान की गई। यह अब न्यायालयों को यह जांचने की शक्ति दी गई क्या निरपेक्ष रुप से अवमानना स्थानीय स्तर पर न्यायक्षेत्र की सीमा में है अथवा नहीं और अवमाननाकर्ता ऐसी सीमाओं के दायरे में है अथवा नहीं।

1.13 उक्त अधिनियम के द्वारा मुख्य न्यायालयों को भी यह शक्ति प्रदान की गई कि वे अपनी अवमानना के मामलों की सुनवाई कर सकें एवं दण्ड दे सकें। उक्त अधिनियम की प्रकृति, प्रकार और साथ ही साथ उच्च न्यायालयों एवं मुख्य न्यायालयों के द्वारा दण्ड देने की सीमा को भी निर्धारित किया गया।

1.14 1 अप्रेल, 1960 को लोकसभा में न्यायालयों की अवमानना से संबंधित कानूनों को मजबूत एवं संसोधित करने के लिये एक बिल लाया गया। इस संबंध में यह महसूस किया गया कि अवमानना के मामले में वर्तमान कानून अस्पष्ट, असंतोषजनक, अनिश्चित है। देश में संवैधानिक सुधार के तहत इस संबंध में भारत सरकार के द्वारा इस बिल का अध्ययन करने के लिये वर्ष 1961 में एक विशेष समिति का गठन श्री एच.एन.सान्याल, तत्कालीन भारत के अतिरिक्त न्यायविद की अध्यक्षता में किया गया। इस समिति ने अदालतों की अवमानना से संबंधित विभिन्न विषयों एवं पहलुओं का सामान्य रुप से एवं अवमानना के मामलों की सुनवाई प्रक्रिया एवं इसके संबंध में दी जाने वाली सजा का बारीकी से अवलोकन किया तथा अपनी रिपोर्ट 1963 में भारत सरकार के समक्ष प्रस्तुत की जिसमें अन्य बिन्दुओं को परिभाषित करने के साथ साथ विभिन्न अदालतों की अवमानना के संबंध में दी जाने वाली सजा को भी सीमित एवं इस संबंध में होने वाली प्रक्रियाओं को भी विनयमित किया गया। यहां पर यह ध्यान देने वाली बात है कि समिति ने अपनी रिपोर्ट में विशेष रुप से आपराधिक अवमानना का उल्लेख किया है, और "इस मामले में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का विशेष रुप से उल्लेख किया है।" इस रिपोर्ट की बहुत सी अनुशंसाओं को राज्य एवं केन्द्रशासित प्रदेशों, प्रशासनों एवं अन्य भाागीदारों से विस्तृत चर्चा के बाद स्वीकार कर लिया गया।[11]

1.15 उक्त बिल पर संसद की संयुक्त चयन समिति ने भी गहन अध्ययन किया एवं अपने कुछ सुझाव एवं संसोधन दिये; जिसमें से एक अवमानना के मामले में कार्यवाही शुरु करने की समय सीमा को कम करना था।

1.16 वृहद विचार विमर्श के पश्चात अदालतों की अवमानना अधनियम, 1971 (1971 का 70) (इसके पश्चात अधिनियम, 1971 के नाम से संर्दभित) अस्तित्व में आया और इसने अधिनियम, 1952 को प्रतिस्थापित किया। अधिनियम, 1971 में अन्य बातों के साथ साथ अदालतों की अवमानना को दो प्रमुख हिस्सों में बॉटा पहला 'दीवानी अवमानना' दूसरा 'आपराधिक अवमानना'। दोनों के लिये अधिनियम की धारा 2 में स्पष्ट रुप से परिभाषा दी गई है। इस में न्यायकि कार्यवाही पर टिप्पणी एवं रिपोर्टिंग के लिये कुछ विशेष अपवाद, संतुत दिशा निर्देश भी दिये गये हैं जिनका उपयोग करने पर अधिनियम के विभिन्न प्रावधान लागू नहीं होंगे। उदाहरण के लिये "एक न्यायिक कार्यवाही की निष्पक्ष एवं सटीक रिपोर्टिंग"(धारा 4) "किसी भी मामलें पर निष्पक्ष टिप्पणी करना जिसकी सुनवाई हो चुकी है एवं निर्णय दिया जा चुका है।"(धारा 5) ऐसे मामलों में अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होगें। यह अधिनियम स्पष्ट रुप से यह प्रावधान देता है "किसी भी तथाकथित कृत्य को तब तक दंण्डित नहीं किया जाएगा जब तक कि यह साबित न हो जाए कि इस कृत्य से वास्तव में या आंशिक रुप से न्यायिक प्रक्रिया में बाधा में पहुंची है" (धारा 13) । यह अधिनियम अवमानना के मामले में कार्यवाही शुरु करने की समय सीमा को भी निर्धारित करती है। (धारा 20).

11 उपर्युक्त नोट 2; उच्चतम न्यायालय अधिवक्ता परिषद बनाम भारत संघ एवं अन्य, एआईआर 1998 एससी 1895 को भी देखें।

1.17 छंटनी से यह महसूस किया जा सकता है कि अधिनियम 1926 तथा उसके बाद अधिनियम, 1952 और 1971 के कारण न्यायालयों के पास अवमानना के मामले में दंण्ड देने की शक्तियों को असीमित एवं अनियंत्रित होने से रोका गया।

1.17 यहां पर भारत के विधि आयोग की 200वीं रिपोर्ट का संदर्भ भी लेना आवश्यक हो जाता है जो कि अपराध संहिता कोड, 1973 (2000) के तहत "मीडिया द्वारा ट्रायल: बोलने के अधिकार बनाम निष्पक्ष जांच" विषय पर आधारित थी। इस रिपोर्ट में 1971 के अधिनियम में कुछ परिवर्तन करने की अनुंशंसा की गई थी। जबकि इन सुझावों में से एक भी सुझाव "आपराधिक अवमानना" विशेषकर "कोर्ट को प्रभावित करने" की परिभाषा को संसोधित करने से संबंधित नहीं था; रिपोर्ट से संसोधन प्रारुप बिल में एक संसोधन प्रस्तावित किया गया जो कि अधिनियम की धारा 2(ग) की व्याख्या करती है जिस में पारिभाषिक शब्द "प्रकाशन" की परिभाषा की विस्तृत रुप से व्याख्या कर इस में .....प्रकाशन से अर्थ अखबार, रेडियो पर प्रसारण, इलैक्ट्रोनिक मीडिया, केबल टीवी पर प्रसारण, इन्टरनेट पर प्रकाशन को शामिल किया गया। हालांकि इन संतुतियों को माननीय उच्चतम न्यायालय के विभिन्न आदेशों को देखते हुए स्वीकार नहीं किया गया।[12]

ख. आयोग के लिये संदर्भ

1.18 कानून एवं न्याय मंत्रालय, न्याय विभाग के पत्र दिनांक 8 मार्च, 2018 के अनुसार भारत के विधि आयोग को 1971 के अधिनियम का न्यायालय के द्वारा न्यायालय की "जानबूझ कर की गई अवमानना के संबंध में दिये गये दिशा निर्देश/ निर्णयों" को लेकर पुनरिक्षण करने एवं इसमें संसोधन करने के लिये कहा गया।

---

12 एचटीटीपी: //doj.gov.in/sites/default/files/Law- commission- Reports_1.pdf (अंतिम बार दिनांक 4 अप्रैल, 2018 को देखा गया)।

अध्याय -2

मौजूदा प्रावधान

क. "अदालत की अवमानना" क्या है?

2.1 बहुत □हले 1742 में लॉर्ड हार्डविक एल.सी ने "अदालत की अवमानना" शब्द के बारे में बताया तथा इस शब्द से तीन प्रकार के कृत्य के बारे में बताया जो कि अदालत की अवमानना को व्यक्त करते हैं: □हला अदालत को प्रभावित करना। इस में मुकदमे में शाामिल □ार्टीयों से गाली गलौज करना तथा सुनवाई के दौरान किसी व्यक्ति के बारे में □ूर्वाग्रह बनाकर न्याय प्रक्रिया को प्रभावित करना शामिल है।[13]

2.2 इंग्लैण्ड का हॉल्सबरी कानून “अदालत की अवमानना” को अधिक सटीक तरीके से व्यक्त करता है: कोई भी किया गया ऐसा कृत्य या प्रकाशित लेख जो कि किसी भी अदालत या न्यायधीश की आलोचना करता है या उसकी शक्तियों का ह्रास करता है या न्यायिक प्रक्रिया या निर्णय को प्रभावित अथवा बाधित करता है, अदालत की अवमानना के दायरे में आता है। न्याय के किसी भी प्रशासनिक घटना की सार्वजनिक या निजी रु□ से आलोचना बशर्ते कि यह आलोचना निष□क्ष और संयमित हो तथा सद्वभावना □ूर्वक की गई हो। उ□रोक्त में से किसी भी एक इरादे के अभाव में न्यायालय के लिये किसी भी व्यक्ति के □क्ष में की गई टिप्□णी अदालत की अवमानना कहलाती है।“[14]

2.3 अदालतों की अवमानना का मामला न्याय के प्रशासन एवं न्यायिक संस्थाओं के मान सम्मान एव गरिमा के लिये चिंता का विषय है।[15] अदालतों की अवमानना से संबंधित कानून को बनाने का कारण न्याय□ालिका को स्वच्छ एवं निष□क्ष बनाए रखना है[16] । और अवमानना का न्यायधिकार किसी भी □क्ष को अ□नी शिकायतों के समाधान के लिये अधिकार के रु□ में उ□योग करने का अधिकार नहीं देता है[17]।

---

13 रीड बनाम हग्गोनसन, (1742) 2 एटीके 469

14 इंग्लैण्ड का हाल्सबरी का कानून (तीसरा संस्करण, वॉल्यूम 8) □ृष्ठ संख्या 7

15 ए.रामालिंगम बनाम वी.वी. महालिंगा नादर, एआईआर 1966 मद्रास 21

16 *□ुनः बीनीत कुमार सिंह,* एआईआर 2001 एससी 2018 *; शकुंतला सहदेवराम तिवारी (श्रीमती) और अन्य बनाम हेमचंद एम. सिंघानिया,* (1990) 3 बोम सीआर 82।

17 *ए रामलिंगम* (उ□र्युक्त)।

ख.संवैधानिक प्रावधान

2.4 यह सर्वविदित है कि संविधान की मूलभूत विशेषता कानून का राज है और कानून के राज को संविधान में सर्वोच्चता प्रदान की गई है।[18] यह अन्य बातों के साथ साथ न्याय प्रशासन से न्यायिक समस्याओं का समाधान प्राप्त करने के बारे में कहता है जो कि अदालतों का काम भी है और यह सभ्य समाज के लिये बहुत ही आवश्यक है। सभी को समान एवं भेदभाव रहित न्याय प्रदान करने के लिये[19] न्यायपालिका को कानून के संरक्षक के तौर पर कुछ असाधारण शक्तियों प्रदान की गई हैं जिसके द्वारा वह अदालतों की गरिमा को गिराने वाले कृत्यों को दण्ड दे सके या अदालतों को अदालतों के अन्दर या बाहर बदनाम करने वाले लोगों को सजा दे सके।

2.5 अवमानना का कानून सजा देने की शक्ति के साथ आम जनता की नजरों में अदालतों के सम्मान को सुनिश्चित करता है तथा यह अदालतों के सम्मान पर आक्रमण करने वाले व्यवहार पर प्रतिबंध लगाता है। वास्तव में यह अदालतों को निष्पक्ष एवं भय के बिना अपना काम ईमानदारी से करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है।[20]

---

18 *परम पावन केशवनंद भारती श्रीपादगल्वरु और अन्य* बनाम *केरल राज्य और अन्य,* एआईआर 1973 एससी 1461; *श्रीमती इंदिरा नेहरू गांधी* बनाम श्री *राज नारायण और अन्य*, एआईआर 1975 एससी 2299; *सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स ऑन-रिकॉर्ड एसोसिएशन और अन्य* बनाम *भारतीय संघ* (2016) 5 एससीसी 1; *हरियाणा राज्य* और अन्य बनाम *भजनलाल और अन्य*, एआईआर 1992 एससी 604।

19 *पुन: मैं: बिनेट कुमार सिंह (उपर्युक्त)।*

20 *पुन: विनय चंद्र मिश्रा*, एआईआर 1995 एससी 2348; *पुन: एसके सुंदरम*, एआईआर 2001 एससी 2374; *श्रीमतीजॉय दास* बनाम *सईद हसीबुर रहमान*, एआईआर 2001 एससी 1293; *जे.आर. पराशर, वकील और अन्य* बनाम *प्रशांत भूषण, वकील, एवं अन्य*, एआईआर 2001 एससी 3395; *छोटू राम* बनाम *उर्वशी गुलाटी और अन्य*, एआईआर 2001 एससी 346

2.6 कपिलदेव प्रसाद शाह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 1999, 7 एससीसी, 569, [21] माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा कि न्यायालय के आदेशों की अवेहलना करना कानून के नियम का उल्लघंन है। अवमानना के कानून को एक प्रकार का धागा माना जा सकता है जो कि संविधान की बुनियादी संरचना को बांधे रखता है। और, अदालतों के सम्मान को बनाए रखना कानून के नियम का प्रमुख सिद्दांत है। न्यायिक प्रक्रिया में अवमानना के कानून का उपयोग किसी से बदला लेने के लिये नहीं बल्कि सोच समझकर किया जाना चाहिए। हालांकि अदालत के सम्मान को क्षति पहुंचाने वाली किसी भी आलोचना या आक्षेप को अवश्य ही दण्डित किया जाना चाहिए।[22]

2.7 अवमानना के मामले में की गई कार्यवाही का अभिप्राय अदालत के आदेशों का प्रवर्तन सुनिश्चित करवाना एवं कानून के नियम की अनुपालना करवाना है। जब एक बार अवमानना के मामले की कार्यवाही शुरु करने के लिये पर्याप्त आधार हो तो अदालत बिना किसी के प्रभाव में आए निर्धारित प्रक्रिया एवं दिशा निर्देशों के अनुसार कार्रवाई शुरु करेगा कि क्या ये दिशा निर्देश दोनों पार्टियों के मध्य लम्बित हैं अथवा ये सामान्य प्रकृति के हैं या विशिष्ठीकृत हैं।[23]

1) रिकॉर्ड अदालतें एवं अवमानना के मामलों में दण्डित करने के लिये शक्ति

2.8 भारत के संविधान ने उच्चतम न्यायालयों एवं उच्च न्यायालयों को रिकॉर्ड अदालत के रुप में पदनामित किया गया है। इसके साथ ही संविधान ने उच्चतम न्यायालय एवं प्रत्येक उच्च न्यायालय को यह शक्ति प्रदान की है कि वह स्वंय की अवमानना के मामले में दण्डित कर सकता है। उक्त शक्ति के बारे में अनुच्छेद 129 में बताया गया है "उच्चतम न्यायालय एक रिकॉर्ड न्यायालय के रुप में काम करेगा तथा इसके पास अवमानना के मामले में दण्ड देने की शक्ति के साथ साथ वे सभी शक्तियां होंगी जो कि एक अदालत को प्राप्त होती हैं"; अनुच्छेद 215 के तहत उच्च न्यायाालयों को भी समान शक्तियों प्रदान की गई हैं।

---

21 (1999) 7 एससीसी 569; *अमीकस क्यूरी के माध्यम से टी.एन. गोदावर्मन थिरुमुलपद* बनाम *अशोक खोट और अन्य, ए ई र 2006 एससी 2007।*

22 *पुन: अरुंधती रॉय,* ए ई र 2002 एससी 1375।

23 *प्रिया गुप्ता और अन्य* बनाम *अतिरिक्त सचिव, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय और अन्य,* (2013) 11 एससीसी 404।

2.9 संविधान के अनुच्छेद 235 के अनुसार उच्च न्यायालयों को अधीनस्थ अदालतों के ऊपर पर्यवेक्षिक नियंत्रण प्रदान किया गया है। इसी क्रम में प्रत्येक उच्च न्यायालय को अपने अपने राज्य की अधीनस्थ अदालतों के ऊपर संरक्षक शक्तियां प्राप्त हैं।

2.10 जबकि संविधान पद "रिकॉर्ड अदालत" को परिभाषित नहीं करता है, जबकि इस के अर्थ से सभी न्यायक्षेत्र भलीभांती परिचित हैं। दिल्ली न्यायिक सेवा संगठन, तीस हजारी कोर्ट बनाम गुजरात राज्य[24] के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने रिकॉर्ड न्यायालय के लिए एक पद "जिसके कार्यकलापों एवं कार्यवाही को लगातार साक्ष्य एवं गवाही के लिये नामांकित किया जाता है।" किसी एक अदालत को जब किसी भी विधान द्वारा रिकॉर्ड अदालत के रुप में घोषित कर दिया जाता है तो उस अदालत को स्वत: ही अपनी अवमानना के मामले में दण्ड देने की शक्ति प्राप्त हो जाती है।[25] ऐसी अदालतों के पास अपने अधीनस्थ अदालतों एवं न्यायिक प्राधिकरणों के अवमानना के मामलों में भी दण्ड देने की शक्तियां होती है।[26] साथ ही रिकॉर्ड अदालतों को अपने क्षेत्राधिकार के प्रश्नों को भी हल करने की शक्ति प्राप्त होती है।[27]

2.11 परिभाषा के रुप में अन्य स्त्रोतों, शब्दों एवं कहावतों[28] के तौर पर "रिकॉर्ड न्यायालय" उस अदालत को कहते हैं जिसके कार्यकलापों एवं न्यायिक कार्यवाही को भविष्य में संदर्भ एवं साक्ष्य हेतु लगातार चर्मपत्र पर नामांकित किया जाता है। इस प्रकार की नियमावलियों को अदालत का "रिकॉर्ड" कहा जाता है और यह अपने आप में सर्वोच्च शक्तिशाली होते हैं, यह प्रश्नों से परे सत्य है[29]। ब्लैक लॉ शब्दकोष (8वां संस्करण) "रिकॉर्ड अदालत" को निम्न रुप में परिभाषित करता है:

---

24 एआईआर 1991 एससी 2176।

25 *दिल्ली विकास प्राधिकरण* बनाम स्कीपर *निर्माण कं (प्राइवेट) लिमिटेड और अन्य*, एआईआर 1996 एससी 2005; *सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन* बनाम *भारतीय संघ,* एआईआर 1998 एससी 1895; और *वितुशाह ओबेरॉय और अन्य* बनाम *स्वंय कोर्ट,* एआईआर 2017 एससी 225।

26 राष्ट्रपति जी के माध्यम से आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण बनाम वी.के अग्रवाल और अन्य, एआईआर 1999 एससी 452

27 *रवि एस. नायक* बनाम *भारत संघ एवं अन्य*, एआईआर 1994 एससी 1558।

28 दुर्ग दास बसु में *भारत का संविधान पर टिप्पणी में* स्थायी संस्करण, वॉल्यूम 10 में 429 पृष्ट पर उद्दगृत 5616 (लेक्सिसनेक्सिस बटरवर्थ्स वाधवा, नागपुर, वॉल्यूम।5, 8वां संसकरण) ।

29 पूर्वोक्त

1. एक न्यायालय जिसे अपनी कार्यवाही को रिकॉर्ड रखने की आवश्यकता होती है। न्यायालय के रिकॉर्ड को सटीक माना जाता है और उन पर समानातंर रुप से संदेह व्यक्त नहीं किया जा सकता है;
2. एक न्यायालय जो अवमानना के लिये लोगों को सजा सुना या जुर्माना लगा सकता है।

2.12 जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने पल्लव शाह बनाम संरक्षक एवं अन्य, एआईआर 2001 एससी 2763 के मामले में कहा कि इस बात में कोई संदेह नहीं है कि उच्च्तम न्यायालय एवं सभी उच्च न्यायालय रिकॉर्ड अदालतें हैं, और यह कि इन अदालतों को संविधान ने अवमानना के मामलों में दण्डित करने की शक्तियां प्रदान की हैं और इन शक्तियों को कोई भी "निरस्त या कम" नहीं कर सकता है।

2) *अनुच्छेद 19(1)(क) के संबंध में अवमानना का कानून*

2.13 अभिव्यक्ति और बोलने की आजादी को "लोकतंत्र की आत्मा" कहा जाता है; संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के तहत भारत के नागरिकों की इस आजादी को सुनिश्चित किया गया है। हालांकि यह अधिकार असीमित नहीं है तथा इसे कुछ विषयों के संबंध में सीमित किया गया है जैसा कि अनुच्छेद 19(2) के तहत कुछ आधारों पर इसे प्रतिबंधित भी किया गया है। ऐसे प्रतिबंधों में से एक अदालत की अवमानना भी है। जिस संविधान के तहत देश के नागरिकों को बोलने और अभिव्यक्ति की आजादी प्रदान की गई है उसी संविधान ने कुछ शक्तियां न्यायपालिका को भी प्रदान की हैं ताकि इन अधिकारों की आड में अदालतों का अपमान होने से या 'न्याय के प्रशासन' में हस्तक्षेप को रोका जा सके।

2.14 अश्विनी कुमार घोष एवं अन्य बनाम अरबिन्दा बोस एवं अन्य, एआईआर 1953 एससी 75 के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि हालांकि न्यायपालिका की निष्पक्ष एवं उचित आलोचना सार्वजनिक हित में स्वागतयोग्य है तथा यह अदालत की अवमानना में नहीं आता है, किसी भी न्यायधीश को किसी भी केस के निर्णय को अतर्कसंगत तरीके से प्रभावित करने के कृत्य को अदालत की अवमानना माना जाएगा।

2.15 बोलने एवं अभिव्यक्ति की आजादी में न्यायालय की अवमानना करना अन्तर्निहित नहीं है।[30] और अनुच्छेद 19(1)(क) के अन्तर्गत बोलने एवं अभिव्यक्ति की आजादी को उपयोग करने की आड में यदि कोई व्यक्ति अदालतों का अपमान करता है या इनकी गरिमा को क्षति पहुंचाता है तो अदालत व्यक्ति को धारा 215 या 129 जो भी लागू हो के अन्तर्गत दण्डित कर सकता है। अदालत की अवमानना के मामले में संसद द्वारा बनाया गया कोई भी कानून या मौजूदा कानून के लागू होने पर बोलने एवं अभिव्यक्ति की आजादी पर तर्कसंगत प्रतिबंध लगाया जा सकता है।[31] कार्यवाही के दौरान की गई निष्पक्ष टिप्पणियों की रक्षा हमेशा ही की जाती है।[32]

3) **अन्य संवैधानिक प्रावधान**

2.16 धारा 129 के अलावा भी उच्च्तम न्यायालय कुछ अन्य शक्तियों को उपयोग धारा 142(2) के अन्तर्गत स्वंय की अवमानना के मामलों की जांच एवं दण्ड देने के लिये करता है जो कि निम्न है:

"…….

(2) संसद के द्वारा इस संबंध में बनाए गये कानून के प्रावधानों के अलावा, उच्चतम न्यायालय सम्पूर्ण भारत के सम्मान के लिये, किसी भी नागरिक के अधिकारों की सुरक्षा के लिये, किसी भी दस्तावेज की खोज या प्रकाशन या **<u>अवमानना के किसी भी मामले में दण्डित करने की सभी एवं प्रत्येक शक्ति एवं अधिकार प्राप्त हैं।</u>**" (जोर देकर कहा गया।)

2.17 अनुच्छेद 142(2) के तहत अवमानना के मामले में दण्ड देने की यह शक्ति अधिनियम 1971 की सीमाओं से बाहर है तथा यह अधिनियम की धारा 20 के तहत वर्णित सीमाओं से अप्रभावित भी है।[33]

---

30 *बॉम्बे राज्य* बनाम *पी,* एआईआर 1959 बोम्बे 182।

31 *जे. आर पराशर* बनाम *प्रशांत भूषण,* एआईआर 2001 एससी 3395; और *हेत राम बेनिवाल एवं अन्य बनाम रघुवीर सिंह एवं अन्य,* एआईआर 2016 एससी 4940।

32 *राम दयाल मार्करा* बनाम *एमपी राज्य,* एआईआर 1978 एससी 921।

33 दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्कीपर निर्माण कम्पनी प्राईवेट लिमटेड एवं अन्य एआईआर 1996 एससी 2005।

यह भी महसूस किया गया है कि अदालतों के अवमानना के मामले का न्यायक्षेत्र वकीलों के गैर पैशेवर आचरण एवं गलत व्यवहार के लिये दण्ड देने के न्यायक्षेत्र से अलग है, धारा 142 के तहत प्रदत्त शक्तियों का उपयोग वकीलों को गैर पैशेवर आचरण एवं गलत व्यवहार के लिये दण्ड देने के लिये किया जा सकता है।`[34]

2.18 उच्चतम न्यायालय अधिवक्ता परिषद बनाम संघ भारत, एआईआर 1998 एससी 1895 के मामले में अदालत ने अवलोकन कर कुछ टिप्पणियां की तथा विनय चन्द्र मिश्रा, एआईआर 1995 एससी 1895 की पुर्नविचार याचिका जो कि किसी वकील की अदालत में स्थापित अवमानना के मामले में उपस्थिति पर प्रतिबंध लगाने पर अपने पूर्व में दिये गये निर्णय को आंशिक रुप से बदला और कहा "किसी आलोचक वकील को अदालत की अवमानना के मामले में दण्ड स्वरुप उसके अदालत में कार्य करने के लाईसेंस को निलम्बित करना केवल भारतीय अधिवक्ता परिषद का अधिकार है, केवल इस आधार पर कि आरोपी एक वकील है इसलिये धारा 120 के उपयोग करने की इजाजत नहीं दी जा सकती है।"

2.19 उक्त परिस्थिति में वर्ष 2016 में महिपाल सिंह राना बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 2016 एससी 3302 के मामले में परिवर्तन आया। इस मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि भारतीय अधिवक्ता परिषद के द्वारा आरोपी वकील के खिलाफ कार्रवाई में असफलता को देखते हुए न्यायालय ने स्वंय संज्ञान लेते हुए अधिवक्ता अधिनियम, 1961 की धारा 38 का उपयोग करते हुए ऐसे वकील का लाईसेंस किसी विशेष समय अवधि के लिये निलंबित कर सकती है... उच्चतम न्यायालय ने आगे कहा:

"हम इस में यह कह सकते हैं कि एक अदालत को अधिवक्ता अधिनियम की धारा 38 के तहत प्रदत्त संवैधानिक अपीलीय शक्तियों को उच्च न्यायालयों द्वारा उपयोग करने की अनुमती अनुच्छेद 226 के तहत भी है जब ऐसे किसी मामले में किसी वकील के विरुद्द भारतीय अधिवक्ता परिषद कार्रवाई करने में असफल हो चुकी हो।"

---

34 *पुन: अजय कुमार पांडे,* एआईआर 1997 एससी 260; यह भी देखें, *प्रीतम पाल* बनाम रजिस्ट्रार के माध्यम से *उच्च न्यायालय, जबलपुर,* एआईआर 1992 एससी 90

ग. अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971

2.20 अधिनियम, 1971 को 1963 के सान्याल आयोग की सिफारिशों को लागू करने के लिये अधिनियमित किया गया था। अधिनियम 1971 की आपत्तियों एवं कारणों के विवरण का अवलोकन करने पर यह महसूस किया गया कि तत्कालीन अवमानना के मौजूदा नियम कहीं न कहीं अपरिभाषित, अनिश्चित एवं असंतोषजनक हैं और जब अवमानना के मामले में सजा दी जाती है तो यह नागरिकों के मुख्य दो मौलिक अधिकारों का हनन करते हैं पहला व्यक्तिगत आजादी का अधिकार और दूसरा बोलने एवं अभिव्यक्ति की आजादी का अधिकार, इस विषय पर गहन विचार विमर्श और जांच पडताल की आवश्यकता थी।

1) <u>अनुच्छेद 2</u>

2.21 अधिनियम की धारा 2 "अदालत की अवमानना" को परिभाषित करती है तथा "दीवानी अवमानना" एवं "आपराधिक अवमानना" में विभेद करती है जो कि निम्न है:

2. परिभाषा- इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ अन्यथा आवश्यक न हो,-

(क) "अदालत की अवमानना" का अर्थ "दीवानी अवमानना" एवं "आपराधिक अवमानना" से है

(ख) "दीवानी अवमानना" का अर्थ अदालत के किसी भी आदेश, हुक्मनामा, दिशा निर्देश, आदेश, रिट, या अन्य प्रक्रिया की अवज्ञा या अदालत को दी गई वचनबद्दता के उल्लंघन से है;

(ग) "आपराधिक अवमानना" का अर्थ प्रकाशित (चाहे बोलकर, लिखित या संकेतकों या दृश्यमान विरोधपत्र के माध्यम से) सामग्री या ऐसे किसी कृत्य से है जिस से कि -

(1) किसी भी अदालत की गरिमा को ठेस पहुंचती हो या पहुंच सकती हो या अदालत की प्रक्रिया में किसी भी प्रकार की बाधा उत्पन्न हुई हो या हो सकती हो; या

(2) किसी भी न्यायिक प्रक्रिया को पूर्वाग्रह से ग्रसित या हस्तक्षेप कर सकता हो; या

(3) किसी अन्य तरीके से न्यायिक प्रशासन के काम में बाधा पहुंचाता हो या पहुंचा सकता हो या हस्तक्षेप करता हो या हस्तेक्षेप कर सकता हो;

2.22 अवमाननाकर्ता के खराब व्यवहार के कारण न्यायिक प्रशासनिक संस्थाओं को गंभीर क्षति पहुंचना भी अवमानना के समतुल्य ही माना जाता है। ऐसे आचरणों के कारण पडने वाले प्रतिकूल प्रभावों एवं परिणामों के आधार पर दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है: (1) जब इस प्रकार के कृत्यों आचरण से व्यवस्था/ प्रभावित व्यक्ति पर पडने वाले प्रभाव अस्थाई हों और समय के साथ साथ इनका प्रभाव धूमिल हो जाए; (2) जब इस प्रकार के आचरण से संस्थाओं या न्यायिक प्रशासन पर स्थाई रुप से प्रभाव पडता हो[35]।

2.23 किसी न्यायाधीश पर अकारण आरोप लगाना या अमर्यादित भाषा का उपयोग करना 1971 के अधिनियम की धारा 2(ग)(1) के तहत अदालत की कार्यवाही में बाधा मानी जाएगी[36]।

2.24 किसी लम्बित दीवानी या आपराधिक मामले के परिणाम को प्रभावित करने के उद्देश्य से दिया गया भाषण संगीन अवमानना के दायरे में आता है। संबंधित पक्षों या उनके वकीलों के द्वारा लम्बित कार्यवाहियों पर की गई ऐसी टिप्पणियां बाहर के स्वतंत्र व्यक्तियों के द्वारा की गई टिप्पणियों की तुलना में अधिक गंभीर अवमानना मानी जाती है[37]।

(2) <u>अनुच्छेद 10</u>

2.25 अधिनियम की धारा 10 अधीनस्थ अदालतों की अवमानना से संबंधित है। यह उच्च न्यायालयों को शक्ति देता है कि वे "अपनी अधीनस्थ अदालतों की अवमानना के संबंध में उसी क्षेत्राधिकार, शक्तियों और अधिकारों का प्रयोग उसी प्रक्रिया और अभ्यास के अनुसार करें, जिनका कि वे स्वयं की अवमानना के संबंध में करते हैं"। परन्तु इस खण्ड के प्रावधानों में कुछ अवमानना के ऐसे मामले अपवाद स्वरुप आते है जिनमें सजा का प्रावधान भारतीय दण्ड सहिंता के द्वारा दी जाती है तथा यह उच्च न्यायालयों को ऐसे मामलों की सुनवाई करने से रोकता है।

---

35 कल्याणेश्वरी बनाम भारत संघ एवं अन्य (2012) 12 एससीसी 599

36 राजेश कुमार सिंह बनाम मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, एआईआर 2007 एससी 2725; और हेतराम बेनीवाल एवं अन्य बनाम रघुवीर सिंह एवं अन्य, एआईआर 2016 एससी 4940

37 हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजन लाल एवं अन्य, एआईआर 1993 एससी 1348

(3) अनुच्छेद 12

2.26 अधिनियम की इस धारा में अदालतों की अवमानना के लिये सजा एवं उनकी सीमाओं का निर्धारण किया गया है; जब अवमाननाकर्ता कोई कम्पनी हो तो उसके खिलाफ भी सजा इसी अनुच्छेद के तहत निर्धारित की जाती है।

(4) अनुच्छेद 14 एवं 15

2.27 अधिनियम की धारा 14 सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय में अवमानना के मामले में उपस्थिति या सुनवाई के दौरान अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का निर्धारण करती है। धारा 15 उच्च न्यायालयों और अधीनस्थ अदालतों के आपराधिक अवमानना (धारा 14 के तहत संबोधित किए गए लोगों के अलावा) से निपटने की प्रक्रिया को बताता है।

2.28 संज्ञान लेने के प्रक्रियात्मक तरीके का निर्धारण करने का लक्ष्य न्यायालय के मूल्यवान समय को छोटी मोटी अवमानना याचिकाओं में बर्बाद होने से रोकने के लिए किया गया है[38]।

2.29 यदि कार्यवाही किसी ऐसे विषय पर की जा रही है जिससे न्याय के प्रशासन और न्याय वितरण प्रणाली पर अतिगंभीर प्रभाव पडे हों तो अवमानना कार्यवाही शुरू करने के लिए महाधिवक्ता की सहमति आवश्यक नहीं है[39]।

2.30 अवमानना के कानून का उपयोग करने के लिये न्यायालय स्वंय संज्ञान ले सकता है अथवा किसी वकील की याचिका पर कार्यवाही शुरु कर सकता है[40]।

38 बाल ठाकरे बनाम हरीश पिम्पलखुंटे एवं अन्य, एआईआर 2005 एससी 396
39 मुत्थु करुप्पन बनाम पारथी इल्मावजुथी, एआईआर 2011 एससी 1645
40 सी.के.धपत्रे बनाम ओ.पी.गुप्ता एवं अन्य, एआईआर 1971 एससी 1132

आपराधिक अवमानना के मामलों में निष्पक्षता बनाए रखने के लिये[41] अवमाननाकर्ता को एक नोटिस जारी किया जाना चाहिए तथा उसको अपने पक्ष में सफाई रखने का एक अवसर अवश्य दिया जाना चाहिए।[42] ऐसे मामलों में औपचारिक आरोप पत्र तो आवश्यक नहीं है फिर भी उपयुक्त एवं सार्थक विवरण अवश्य उपलब्ध करवाया जाना चाहिए। आगे यदि अवमानना की कार्यवाही के लिये प्रक्रिया निर्धारित की गई है या इस संबंध में कोई नियम बनाए गये हैं तो उनका पालन अवश्य किया जाना चाहिए[43]।

2.31 एल.पी मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 1998 एससी 3337 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि जब उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 215 के तहत अपनी असाधारण शक्तियों का उपयोग करता है तो कानून के द्वारा निर्धारित प्रक्रिया की पालना करना आवश्यक हो जाता है।

(5) <u>धारा 16</u>

2.32 इस अधिनियम की धारा 16 किसी न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट या किसी भी न्यायिक प्रक्रिया से संबंधित व्यक्ति के द्वारा किये गये अवमानना से संबंधित है। एक न्यायधीश भी न्यायिक उत्तरदायित्व के निर्वाहन करते समय न्यायिक प्रशासन के साथ दुराचार कर सकता है[44]।

2.33 इस प्रकार की आपराधिक अवमानना का कृत्य उच्च न्यायालय के एक जज के द्वारा किया गया। उन्होंने अपनी खण्ड पीठ के कुछ साथियों एवं उच्चतम न्यायालय के कुछ जजों के ऊपर सार्वजनिक रुप से गंभीर आरोप लगाये। परन्तु जब उन्हें आरोपों को सिद्द करने के लिये बुलाया गया तो न तो उन्होंने अपने आरोपों को सिद्द किया और न हीं इस संबंध में केस लडा। ऐसे मामले में आरोपी न्यायाधीश को अवमाननाकर्ता माना गया और सजा सुनाई गई। (पुन:में सी.एस. कर्नन (2017) 2 एससीसी 756)।

---

41 *सुखदेव सिंह सोढ़ी* बनाम *मुख्य न्यायाधीश एस. तेज सिंह और माननीय न्यायाधीश पेप्सु उच्च न्यायालय*, एआईआर 1954 एससी 186।

42 जेआर पराशर, *उपर्युक्त* नोट 31।

43 *नगर महापालिका कानपुर* बनाम *मोहन सिंह* (1966) सभी डब्ल्यूआर 179 (एससी); तथा *सहदेव @ सहदेव सिंह* बनाम *यूपी* राज्य और अन्य, (2010) 3 एससीसी 705।

44 *बर्दाकांत* बनाम *रजिस्ट्रार, उड़ीसा उच्च न्यायालय*, एआईआर 1974 एससी 710

(6) अनुच्छेद 22

2.34 यह अनुच्छेद निर्दिष्ट करता है कि 1971 के अधिनियम के प्रावधान अदालत की अवमानना से संबंधित अन्य मौजूदा कानूनों के पूरक प्रावधान हैं।

2.35 यह अधिनियम एक निष्पक्ष प्रक्रिया का प्रावधान करता है तथा 1926 के अधिनियम से पहले की तुलना में अदालतों की अवमानना के संबंध में प्राप्त शक्तियों को सीमित करता है। अधिनियम 1926, 1952 और 1971 के लागू होने से अदालतों को अवमानना के मामले में प्राप्त अनियंत्रित या असीमित शक्तियों में कमी आई है। अदालत की अवमानना के लिये दी जाने वाली सजा की मात्रा या जुर्माने की रकम के मामले में अपील के अधिकार का प्रावधान किया गया है। जैसा कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के द्वारा कानूनी अनुस्मारक (पूर्वोक्त) के मामले में दिये गये फैसले से स्पष्ट है।

(घ) आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 (सीआरपीसी),

2.35 अदालत की अवमानना के संबंध में अधिनियम, 1971 के तहत की गई कार्यवाही के दौरान सीआरपीसी का उपयोग नहीं किया जाता है (धारा 5, सीआरपीसी)। उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय अपनी संवैधानिक शक्तियों या अन्तर्निहित शक्तियों का उपयोग रिकॉर्ड अदालत के रुप में ही कर सकते हैं। (देखिए-सुखदेव सिंह सोढी)(पूर्व)

2.36 धारा 345, सीआरपीसी, अवमानना के कुछ मामलों में सीआरपीसी की धारा किसी भी दीवनी, फौजदारी, या राजस्व अदालत को किसी भी ऐसे व्यक्ति को तुरंत दण्डित करने की शक्ति प्रदान करती है जो कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 175, 178, 179, 180, या धारा 228 के तहत अदालत के विचारों या समक्ष दोषी पाया गया है।

2.37 *अरुण पासवान एसआई* बनाम *बिहार राज्य और अन्य*, एआईआर 2004 एससी 721 के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि सीआरपीसी की धारा 345 के अवलोकन करने के बाद यह पता चलता है कि आईपीसी की धारा 175, 178, 179, 180 या आईपीसी की धारा 228 के तहत तब ही अवमानना मानी जाएगी जब वे अदालत के दृष्टिकोण या उपस्थिति में की गई है।" इस धारा से यह भी पता चलता है कि *धारा 175, 178, 179, 180 या 228 के तहत किया गया अपराध अवमानना नहीं माना जा सकता है। इनको अपराध तभी माना जाएगा जब यह अपराध "अदालत के दृष्टिकोण या उपस्थिति" में किया गया है, अन्यथा यह पूर्णरुपेण भारतीय दंड संहिता के तहत अपराध माने जाएंगे।* " अदालत के बाहर न्यायाधीश के खिलाफ में नाराजगी व्यक्त करना, चिल्लाना और अपमानजनक भाषा का उपयोग करने के मामले में

उच्चतम न्यायालय ने यह कहा कि चूंकि तिरस्कारपूर्ण व्यवहार के लिये आईपीसी के तहत कार्रवाई नहीं की जा सकती है और यह अधिनियम 1971 की धारा 10 की सीमा के अन्तर्गत भी नहीं आता है इसलिये इसे उच्च नयायालय के न्यायक्षेत्र से अलग नहीं किया जा सकता है।

ड. शक्तियों की व्यापकता:

2.38 उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की अवमानना के मामलों में दण्डित करने की शक्ति पूरी तरह से भारतीय संविधान के अनुच्छेद 129 और 215 पर ही निर्भर नहीं है। अवमानना के लिए दंड देने की शक्ति का उपयोग अदालतें पुरातन काल से ही करती आ रही हैं[45]; यह उनके कार्य को निष्पादित एवं शक्तियों को बनाए रखने के लिये आवश्यक है[46]।

2.39 *गिल्बर्ट अहनी* बनाम *निदेशक, लोक अभियोजन पक्ष*[47] *के* मामले में प्रिवी काउंसिल ने बताया था कि इन शक्तियों के स्त्रोत को न्यायालयों के प्राथमिक कार्यों में देखा जा सकता है जो कि जहां न्याय को निष्पक्ष रुप से सम्पादित करना एवं न्याय को प्रबंधित करना है। इन कर्तव्यों को प्रभावी रूप से करने के लिए न्यायालयों के पास अपने आदेशों को लागू करवाने की शक्ति होनी चाहिए और ऐसे अपरोधों के लिये उपयुक्त सजा देनी चाहिए जो कि अदालत की गरिमा के प्रतिकूल हों।

---

45 *पुन: सीएस कर्णण (उपर्युक्त)*।

46 *कार्टवाइट का मामला*, 114 मास 230।

47 [1999] 2 एसी 294।

2.40 अदालत की अवमानना के मामलों में न्यायालय द्वारा दण्डित करने की शक्ति को कुछ उच्च अदालतों में अर्न्तनिहित माना गया है तथा अन्य अदालतों को कानून द्वारा प्रदान किया गया है।

2.41 पुन: सी.एस.कर्नन (2017) 2 एससीसी 756 के मामलें में कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश कर्नन को किसी भी न्यायिक और प्रशासनिक कार्य करने से रोका गया। अदालत ने यह माना कि अदालत की अवमानना के मामले में अदालत के पास दण्डित करने की शक्ति न्यायिक इतिहास में हमेशा उसके पास ही रहेगी।

2.42 रेक्स बनाम ऐल्मोन (1765) के एक पुराने न्यायिक मामले में इस विषय से संबंधित न्यायाधीश विलमोट का कथन अदालत की अवमानना के मामले में दण्डित करने की शक्ति के पीछे के दर्शन पर प्रकाश डालता है। यह लेख इस विषय की सबसे अच्छी तरह से व्याख्या करता है:

> "और जब भी कानून के लिए आम आदमी की निष्ठा पर गहरा आघात होगा, तो यह न्याय के रास्ते में सबसे घातक और सबसे खतरनाक बाधा है और मेरी राय में न्यायाधीशों को ऐसी बाधाओं का समाधान अधिक तेजी से और तत्काल करना चाहिए, केवल इसलिये नहीं की जज एक व्यक्ति है बल्कि इसलिये कि वह राजा के न्याय को लोगों तक पहुंचाने का माध्यम हैं .....।"

2.43 अवमानना के मामले में दण्डित करने की शक्ति किसी जज विशेष को सुरक्षा प्रदान करने के लिये नहीं दी गई है। इसके विपरीत इसे न्यायपालिका की पवित्रता और प्रभावकारिता में वृद्दि करने एवं इसे बनाए रखने के लिये दी गई है। हालांकि वे अवमानना के लिए दंडित करने के लिए शक्ति का गलत उपयोग नहीं करते हैं और नहीं करना चाहिए "। बल्कि ऐसे सिद्दातों को लोगों के मजबूत भरोसे और विश्वास की नींव पर रखा जाना चाहिए जो कि लोगों को यह अहसास करवाए कि न्यायपालिका निडर और निष्पक्ष है। जैसा कि इसे हेल्मोर बनाम स्मिथ के मामले में निष्पक्ष रुप से देखा गया[48], "अदालत की अवमानना के मामले में अदालत के द्वारा लागू किये गये अनुशासन का लक्ष्य किसी न्यायालय या जज या किसी व्यक्ति की गरिमा को स्थापित करना नहीं है बल्कि इस का लक्ष्य न्यायिक प्रक्रिया और न्यायिक प्रशासन में उत्पन्न होने वाले विभिन्न अवांक्षित व्यवधानों को रोकना है।"

---

48 (1887) 35 अध्याय डी 449, 445

2.44 ई.एम शंकरन नंबूद्रीपाद बनाम टी.नारायणन नाम्बियार, एआईआर 1970 एससी 2095, में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा:

"अवमानना का कानून अदालतों को दोषी व्यक्तियों को कारावास या जुर्माना लगाकर दंडित करने का अधिकार प्रदान करता है जिनके कृत्यों या शब्दों से न्याय के प्रशासन में बाधा उत्पन्न होती है या हो सकती है। इस अधिकार का उपयोग भारत में सभी अदालतों द्वारा तब किया जाता है जब अदालत की अवमानना चाहे अदालत के अन्दर या बाहर की गई हो, उच्चतर न्यायालय स्वंय की अवमानना में स्वंय तथा अपनी अधीनस्थ अदालतों के मामलों में भी इस अधिकार का उपयोग करते हैं जब अवमानना अदालतों के बाहर की गई हो। पूर्व में, इसे रिकॉर्ड अदालतों की शक्तियों में निहित माना जाता था और अब भारत के संविधान द्वारा यह सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की शक्तियों का हिस्सा है। ... "

2.45 रजिस्ट्रार के माध्यम से इलाहबाद उच्च न्यायालय बनाम राज किशोर और अन्य में, एआईआर 1997 एससी 1186, सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि अवमानना का क्षेत्राधिकार मूल प्रकृति में स्वतंत्र क्षेत्राधिकार है चाहे उसका जन्म न्यायालय अवमानना अधिनियम या अनुच्छेद 215 के तहत भारत के संविधान से हुआ हो।

2.46 आर.एल. कपूर बनाम मद्रास राज्य, एआईआर 1972 एससी 858 के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने इस सवाल की जांच की कि क्या मद्रास उच्च न्यायालय को अपनी अवमानना के मामले में दण्डित करने की शक्ति अदालत की अवमानना अधिनियम, 1952 से प्राप्त है या नहीं। अदालत ने कहा:

> "... हालांकि अनुच्छेद 215 उच्च न्यायालय को पहले से ही सारी शक्तियां प्रदान करता है क्योंकि इसका कारण यह है कि वह एक रिकॉर्ड अदालत है या रिकॉर्ड अदालत होने के कारण उक्त अदालत को यह शक्तियां प्राकृतिक रुप से प्राप्त है, यह न्यायाधिकार क्षेत्र विशिष्ठ है, जो कि अदालत की अवमानना अधिनियम, 1952 से नहीं मिलती हैं.....किसी भी मामले में, जहां तक उच्च न्यायालय की स्वंय की अवमानना का प्रश्न है, अधीनस्थ अदालतों की शक्तियों से विशिष्ठ, संविधान ने प्रत्येक उच्च न्यायालयों को तीन अधिकार दिये हैं और इसलिये कोई संसदीय कानून इन शक्तियों और न्यायिक अधिकारों को न तो छीन सकता है और नहीं कोई नई शक्तियां प्रदान कर सकता है....."

2.47 प्रीतम पाल बनाम रजिस्ट्रार के माध्यम से मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर, एआईआर 1992 एससी 904 के मामले में शीर्ष अदालत ने कहा:

".....अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 से पूर्व, संक्षिप्त रुप से यह माना जाता था कि उच्च न्यायालयों के पास स्वंय की अवमानना के मामले में दण्ड देने की शक्ति प्राकृतिक रुप से उपलब्ध थी और ऐसे मामलों से निपटने के लिये उनकी पास अपनी प्रक्रियाएं थी बशर्ते कि वे अवमाननाकर्ता को अपने बचाव में निष्पक्ष एवं समान अवसर प्रदान करे। परन्तु संविधान की सातवीं अनुसूची की तीसरी सूची की 14वीं प्रविष्ठी के द्वारा अधिनियम की धारा 15 के द्वारा प्रक्रिया निर्धारित की गई है। हालांकि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के अवमानना के न्यायक्षेत्र के संबंध में शक्तियों को सूची 1 की 77वीं प्रविष्ठी और तीसरी सूची की 14वीं प्रविष्ठी के द्वारा प्रदान की गई शक्तियों के द्वारा उपयुक्त कानून बनाकर विनयमित किया जा सकता है जिसके तहत संसद ने 1971 का अधिनियम बनाया है, **उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय की अवमानना की शक्तियों को एक संवैधानिक आधार संविधान की धारा 129 एवं 215 के तहत प्रदान किया गया है और इसलिये उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय की प्राकृतिक शक्तियों को संसद के बनाए गये किसी भी संविधान संसोधन के द्वारा नहीं छीनी जा सकती है....."**(जोर देते हुए कहा)

2.48 यहां पर ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि जो अधीनस्थ अदालतों की अवमानना के मामले में उच्च न्यायालय को दण्ड देने की शक्ति प्राप्त है वह विधान द्वारा प्रदत्त की गई है न कि संविधान द्वारा।[49]

2.49. अवमाानना के मामले में दण्ड देने की शक्ति हमेशा से ही अदालतों में अन्तर्निहित है परन्तु फिर भी इसके उपयोग के कुछ निर्धारित मानदण्ड हैं। न्यायापालिका के सदस्यगण हमेशा से इसके उपयोग को लेकर जागरुक रहे हैं और इस तथ्य ये भलीभांती परिचित हैं कि इन शक्तियों का उपयोग अति सावधानी पूर्वक किया जाना चाहिए और इनका उपयोग मजबूरी में ही अन्तिम हथियार के रुप में किया जाना चाहिए।[50]

"प्रतिकारिता अच्छी वस्तु है केवल अभिव्यक्ति की आजादी के लिये ही नहीं बल्कि इस से प्रमाणिकता की रोशनी प्रज्जवलित करके एक मजबूत विश्वास का निर्माण होता है, यहां तक कि मामूली से अतिउत्साही व्यवहार, आलोचना की भी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए। न्याय कोई बन्धनकारी गुण नहीं है।[51]

2.50 उच्चतम न्यायालय ने भी निरन्तर यह कहा है और पुष्टि भी की है कि उच्चतम न्यायालय को धारा 129 और उच्च न्यायालयों को धारा 215 के तहत प्राप्त शक्तियों को संसद या किसी भी राज्य की विधानसभा द्वारा कम नहीं किया जा सकता है।[52] तद्नुसार यहां तक कि उनकी खुद की अवमानना के मामले में उक्त धाराओं 129 और 215 से प्राप्त शक्तियों को किसी भी विधान द्वारा निरस्त या नियंत्रित नहीं किया जा सकता है।[53]

---

49 दुर्गा दास बसु, *भारत के संविधान* 5628 (लेक्सिसएक्सिस) *पर टिप्पणी* बटरवर्थ्स वाधवा, नागपुर, वॉल्यूम 5, 8वां संस्करण) ।

50 *श्री बर्दाकांत मिश्रा* बनाम *उड़ीसा उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार और* अन्य, एआईआर 1974 एससी 710 (माननीय अय्यर, जे - अलग लेकिन समेकित राय) पैरा 65 और 67 देखें।

51 पूर्वोक्त 82

52 देखें: *दिल्ली न्यायिक सेवा संघ* बनाम *भारतीय संघ*, 1998 (2) एससीसी 369;
आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण बनाम *वी.के अग्रवाल और अन्य*, एआईआर 1999 एससी 452;
पुन: विनय चंद्र मिश्रा, एआईआर 1995 एससी 2348 और *पल्लव शैठ* बनाम *कस्टोडियन और अन्य*, एआईआर 2001 एससी 2763।

53 *सीके दफ्तरी* बनाम *ओ.पी गुप्ता एवं अन्य*, एआईआर 1971 एससी 1132।

च. अवमानना के न्यायिक क्षेत्र पर संसद को कानून बनाने की प्राप्त शक्तियां :

2.51 *दिल्ली न्यायिक सेवा संघ*, तीस हजारी अदालत, दिल्ली (उपर्युक्त) के केस में यह महसूस किया गया कि संविधान की सातवीं अनुसूची से जुडी हुई सूची के बिन्दु संख्या 77 को धारा 246 के साथ पढने से संसंद को सुप्रीम कोर्ट के संविधान, संगठन, न्यायक्षेत्र, एवं शक्तियों से संबंधित विषयों पर विधान बनाने की शक्तियां प्राप्त हैं। संसद को उच्चतम न्यायालय की अवमानना से संबंधित मामलों पर भी कानून बनाने, ऐसे मामलों में प्रक्रिया का पालन करने, अवमानना के लिये सजा की मात्रा तय करने की शक्तियां प्राप्त हैं। हालांकि न्यायालय ने यह भी कहा कि केन्द्रिय विधायिका को संविधान की धारा 129 के तहत इस अदालत को प्राप्त शक्तियों में कटौती करने या उनका शमन करने का अधिकार नहीं है। उच्चतर रिकॉर्ड अदालतों को अपने अधीनस्थ अदालतों की अवमानना के मामलों में दण्डित करने की शक्ति *अदालत की अधीक्षण की प्रशासनिक शक्ति* के कारण नहीं दी गई है, बल्कि यह अर्न्तनिहित न्यायिक शक्ति इस आधार पर उच्चतर अदालतों को दी गई है ताकि वे इस शक्ति के माध्यम से अधीनस्थ अदालतों की गलतियों को सुधार सकें।“

2.51 *सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन* (*उपर्युक्त*) के केस में अदालत ने संविधान के अनुच्छेद 142 (2) को संदर्भित करते हुए कहा था कि न्यायालय की स्वंय की किसी भी अवमानना के मामले की जांच करवाने एवं दंडित करने की शक्ति संसद द्वारा इस संबंध में बनाए गए किसी भी कानून के 'प्रावधानों के अधीन है। अदालत ने इस प्रकार निष्कर्ष निकाला:

"हालांकि, अवमानना के लिए दंडित करने की शक्ति रिकॉर्ड अदालत में निहित, यह इस तरह से है कि संसंद के द्वारा बनाया गया कोई भी कानून इस अंतर्निहित क्षेत्राधिकार को खत्म नहीं कर सकता है और नहीं संसंद की कानून बनाने की शक्ति ऐसा कर सकती है, इनको इस तरह से उपयोग किया जाना चाहिए ताकि उच्चतम न्यायालय या/और उच्च न्यायालयों की गरिमा बनी रहे, हालांकि ऐसे कानून एक दिशा निर्देशक के रुप में अवमानना के स्थापित मामलों में सजा की प्रकृति निर्धारित करने में उपयोग किये जा सकते हैं। *संसद ने अभी तक कोई भी ऐसा कानून नहीं बनाया है जो उच्चतम न्यायालय की स्वंय की अवमानना के मामले की जांच और दण्डित करने की शक्ति से संबंधित हो.....और यह अदालत भारत के संविधान की धारा 129 और 142(2) में प्रदत्त शक्तियों का उपयोग करते हुए स्वंय की अवमानना के मामलों में जांच और दण्डित करती है।“*

2.53 अजय कुमार पाण्डेय, एआईआर 1997 एससी 260, के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह बताया कि अधिनियम 1971 संविधान की धारा 129 के तहत प्रदान किये गये न्यायधिकार को कभी भी खत्म या कम नहीं किया जा सकता है तथा उक्त अधिनियम उच्चतम न्यायालय की इस शक्ति को कभी भी उस से छीन, सीमित या प्रतिबंधित नहीं कर सकता है।

अध्याय - 3

अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य

क. पाकिस्तान

3.1 पाकिस्तान में अदालत की अवमानना अधिनियम, 1926 ही इस विषय में प्रमुख कानून बना रहा तथा इसे अदालत की अवमानना अधिनियम, 1976 के द्वारा निरस्त कर हटा दिया गया।

3.2 साथ ही इस्लामिक पाकिस्तानी गणराज्य, 1973 की धारा 204 के साथ संघीय गणराज्य सूची की प्रविष्टी संख्या 55 (संविधान की अनुसूची 4) के साथ पढने पर उच्चतम न्यायालय को स्वंय की अवमानना के मामले में जांच करने एवं दण्डित करने का अधिकार प्रदान करता है जिस में "अदालती कार्यवाही में बाधा डालना" या न्यायालय या न्यायधीश को कार्यालयीन कार्य के संबंध में प्रभावित करना, उपहास करना या अवमानना शामिल है।

3.3 2003 में अदालत की अवमानना अध्यादेश, 2003 के द्वारा अदालत की अवमानना अधिनियम, 1976 को निरस्त कर दिया गया तथा बाद में उक्त अध्यादेश को निरस्त कर उसके स्थान पर अदालत की अवमानना अधिनियम, 2012 लाया गया। इस अधिनियम में एक अपवादस्वरुप प्रावधान किया गया कि यह अधिनियम प्रधानमंत्री एवं अन्य मंत्रियों सहित सार्वजनिक पदों पर बैठे हुए व्यक्तियों पर लागू नहीं होगा। और "अदालत को प्रभावित करने" के स्थान पर "किसी जज को उसके कार्यालय के संबंध में प्रभावित करना" शामिल कर कई विविध संसोधन किये गये।

3.4 बाज मोहम्मद कक्कर एवं अन्य बनाम पाकिस्तान संघ इत्यादि इत्यादि इत्यादि[54] के मामले में पाकिस्तान के उच्चतम न्यायालय ने अधिनियम 2012 को कई आधारों पर अन्य बातों के साथ साथ असंवैधानिक घोषित कर दिया:

---

54 3 अगस्त, 2012 को संविधान याचिका में निर्णय और आदेश 2012 की संख्या 77 आदि आदि आदि ..

i) *अवमानना के कृत्यों को अनुच्छेद 204 (2) (ख) के तहत दंडित करने का प्रावधान किया गया और और जो अन्य अवमानना के कृत्य अनुच्छेद 204 (2) (ग) के तहत आते थे उन्हे अधिनियम 2012 में अदालत की अवमानना की परिभाषा में से विलोपित कर दिया गया।*

ii) *"किसी जज को उसके कार्यालय के संबंध में प्रभावित करना" अभिव्यक्ति को शामिल कर अदालत की शक्तियों को कम किया गया जबकि अनुच्छेद 204 (2) में 'अदालत' शब्द था।*

iii) *अनुच्छेद 63 (छ) के तहत यह प्रावधान किया गया था कि यदि कोई भी व्यक्ति अदालत का उपहास करने के मामले में दोषी ठहराया जाता है या सजा प्रदान की जाती है तो वह व्यक्ति किसी भी सार्वजनिक पद से पदच्युत कर दिया जाएगा जबकि अधिनियम 2012 की धारा 3 में इस प्रावधान को विलोपित कर दिया गया, और किसी जज को प्रभावित करना उसके कार्यालय के संबंध तक ही सीमित रखा गया।*

iv) *अनुच्छेद 204 (2) के तहत अदालत को "किसी भी व्यक्ति को दंडित करने का अधिकार बिना किसी अपवाद के दिया* गया था परन्तु *अवमानना के लिए अधिनियम 2012 की धारा 3 के तहत सार्वजनिक पदों पर आसीन व्यक्तियों को इस दायरे से बाहर रखा गया।*

v) *अधिनियम 2012 को अवमानना के मामलों में होने वाली देरी को समाप्त करने के लिये बनाया गया था लेकिन यह न केवल न्यायपालिका की गरिमा के प्रतिकूल था बल्कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता के सिद्दांत के भी विरुद्द था।*

vi) *इसके अलावा, अधिनियम 2012 की धारा 8 अवमानना मामलों में कार्यवाही का हस्तांतरण को विनियमित करता है जो कि अदालत के प्रशासनिक प्रमुख होने के नाते मुख्य न्यायाधीश के विशेषाधिकार का हनन था* और *न्यायपालिका की आजादी के सिद्धांत का उल्लंघन था।*

3.5 सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि अधिनियम 2012 असंवैधानिक, निरर्थक और *गैर उपयोगी है और* इसके परिणामस्वरूप 2003 का अवमानना अध्यादेश नैसर्गिक रुप से लागू किया जाता है।

3.6 यह स्पष्ट है कि पाकिस्तान के संविधान के अनुच्छेद 204 (2) अदालत को प्रभावित करने' के लिये 'किसी भी व्यक्ति' को दंडित करने का अधिकार देता है।

ख. इंग्लैंड और वेल्स

3.7 अंग्रेजी कानून के तहत, अदालत की अवमानना के संबंध में प्राथमिक कानून अदालतों की अवमानना अधिनियम, 1981 है, जो नागरिक और आपराधिक अवमानना के मामले में दोषी व्यक्ति को अधिकतम दो वर्ष का कारावास देने की सीमा निर्धारित करता है। अधिनियम की धारा 1 के तहत, 'सख्त देयता नियम' का प्रावधान किया गया है, जिसके तहत ऐसे आचरण को अदालत की अवमानना के रूप में माना जा सकता है जो कि न्यायिक कार्यवाही में हस्तक्षेप करने के इरादे से किया गया हो।[55]

3.8 2012 में, यूनाइटेड किंगडम के विधि आयोग ने अवमानना शक्तियों पर एक पत्र प्रकाशित किया, जिसमें यह स्पष्ट रूप से अनुशंसित किया गया कि 'अदालत को प्रभावित करना' आपराधिक अवमानना के दायरे में नहीं माना जाएगा। इस अनुशंसा को मान लिया गया तथा उक्त अपराध को 2013 में अपराध एवं अदालत अधिनियम में संसोधन कर समाप्त कर दिया गया। आयोग ने अनुशंसा करते समय यह महसूस किया कि अवमानना की शक्ति का उद्देश्य राजद्रोह परिवाद की शक्तियों के समान ही है जो राज्य और न्यायालय को प्रभावित करने के मामले में न्यायधीश के सम्मान के बारे में क्या कहा जा सकता है को नियंत्रित कर सुनिश्चित करता है। राजद्रोही परिवाद को समाप्त करने के साथ ही न्यायालय को प्रभावित करने का प्रावधान भी कमजोर हो गया। इंग्लैंड और वेल्स, में 20वीं शताब्दी में केवल दो मुकदमे ही इस संबंध में दर्ज हुए और वे भी 1931 से पहले। इस प्रकार यह प्रावधान असंगत और अनुपयोगी बन गया।[56]

---

55 https://www.legislation.gov.uk/ukpga/1981/49 पर उपलब्ध (अंतिम बार 2 अप्रैल, 2018 को देखा गया)

56 विधि आयोग (कानून सं. सं. 335) "अदालत की अवमानना: कोर्ट स्कैंडलाइजिंग", (2012) [लंदन:(स्टेशनरी कार्यालय)],

https://www.gov.uk/government/uploads/system/uploads/attachment_data/file/246860/0839.pdf पर उपलब्ध (अंतिम बार 2 अप्रैल, 2018 को देखा गया); *यह भी देखें: सी.एस.कर्णन (उपर्युक्त)*

3.9 विधि आयोग ने यह भी कहा कि यदि कृत्य पर्याप्त रुप से आपराधिक या धमकाने वाला है तो इसे प्रमुखता से सार्वजनिक आदेश अधिनियम, 1986 या संवाद अधिनियम, 2003 के तहत शामिल किया जा सकता है।[57]

क. संयुक्त राज्य अमेरिका

3.10 संयुक्त राज्य अमेरिका में अवमानना के कानून के तहत, 'अदालत की अवमानना' को अवज्ञा के कार्य के रूप में या सरकार की न्यायिक शाखा के अपमान, या इसकी व्यवस्थित प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने के लिये परिभाषित किया गया है। यह न्यायिक अदालत या किसी ऐसे व्यक्ति जिसको न्यायिक कार्य करने के लिये संप्रभुता सौंपी गई है के खिलाफ एक अपराध है (**9-39,000 - अदालत की अवमानना**)[58]।

3.11 अदालत को स्वंय की अवमानना के मामले में दण्ड देने की शक्ति संयुक्त राज्य अमेरिका कोड के शीर्षक 18 से प्राप्त होती है[59] जो कि संयुक्त राज्य अमेरिका की संघीय सरकार का प्रमुख आपराधिक कानून है; यह अवमानना के अन्य प्रकार के मामलों से भी संबंध रखता है जैसे अपराधों को निर्मित करने वाली अवमानना, अन्य के मध्य आपराधिक अवमानना। [60] *पूर्व भाग रॉबिन्सन,* 19 वॉल 505 के अवमानना के मामले में दंडित करने के लिए संघीय न्यायालयों की अंतर्निहित शक्ति का जिक्र करते हुए उच्चतम न्यायाल ने कहा:

"*जिस समय संयुक्त राज्य अमेरिका की अदालतों के अस्तित्व को चुनौति दी जाती है और किसी भी विषय के क्षेत्राधिकार पर अतिक्रमण किया जाता है, तब ये शक्तियां स्वंय ही अदालत के पास होती हैं।*"

---

57 पूर्वोक्त

58 Https://www.justice.gov/usam/usam-9-39000-contempt-court पर उपलब्ध (अंतिम 4 अप्रैल, 2018 को देखा गया)

59 18 यूएस कोड § 401 - अदालत की शक्ति, https://www.law.cornell.edu/uscode/text/18/part-I/chapter-21; पर उपलब्ध है (अन्तिम बार 4 अप्रैल, 2018 को देखा गया) ।

60 18 यूएस कोड अध्याय 233 - अवधारणाएं, https://www.law.cornell.edu/uscode/text/18/part-II/chapter-233 पर उपलब्ध हैं (अंतिम बार 4 अप्रैल, 2018 को देखा गया) ।

3.12 संयुक्त राज्य अमेरिका का कानून अदालत की अवमानना को दीवानी और आपराधिक दो भागों में वर्गीकृत करता है - जब अपराधी को आपराधिक मामले में दण्डित करना होता है तो अपराध को स्पष्टत: साबित करना होता है; इसे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अवमानना में भी वर्गीकृत किया जा सकता है: प्रत्यक्ष अवमानना वह होती है जो कि अदालत में की जाए; अप्रत्यक्ष अवमानना वह होती है जब अवमानना अदालत के बाहर की जाए और अदालत के पूर्व आदेशों की अवेहलना की गई हो। अवमानना के मामले में दोषी पाए जाने पर कैद की सजा सुनाई जा सकती है जिसे 14 वर्षों तक बढाया जा सकता है।[61]

3.13 आगे, संयुक्त राज्य अमेरिका में अदालत की अवमानना एवं प्रथम संसोधन के तहत अभिव्यक्ति की आजादी सहित अधिकारों की सुरक्षा के अन्र्तसंबंधों पर चर्चा करते हुए अमेरिकी न्यायशास्त्र अभिव्यक्ति की आजादी की रक्षा पर ही अधिक जोर देता है: "संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान पारम्परिक रुप से अभिव्यक्ति की आजादी का सम्मान करता है जैसा कि प्रथम संसोधन में प्रतिष्ठापित किया गया है, यह सबसे महत्वपूर्ण अधिकार है जो कि सभी प्रकार के विवादित मामलों में हमेशा ही विधमान रहता है जब तक कि ऐसे किसी मामले में अदालत के सम्मान को स्पष्ट खतरा उत्पन्न न हो जाए और कॉन्ग्रेस को इस से निपटने का अधिकार है"[62]

---

61 *चाडविक* बनाम *जेनेका* (3 डी सर्क 2002) ।

62 *शेन्केक* बनाम *संयुक्त राज्य अमेरिका* 24 9 यूएस 47 (1 9 1 9); *उपर्युक्त* नोट 56 भी देखें

अध्याय - 4
"अवमानना" पर न्यायिक दृष्टिकोण

4.1 एक शक्तिशाली न्यायपालिका एक स्वस्थ्य लोकतंत्र के लिये अपरिहार्य शर्त है। यदि न्यायालय को धमकाना, पेशेवर मूल्यों और परम्पराओं का खुला उल्लघंन, असभ्य आचरण को सहन किया जाएगा तो परिणामस्वरुप अन्ततः व्यवस्था का पतन हो जाएगा और जिसके बिना कोई भी लोकतंत्र जीवित नहीं रह सकता है[63]। जब जानबूझकर अदालत को प्रभावित किया जाएगा तो न्याय की आस लगाए जनता का विश्वास न्याय प्रणाली पर से उठ जाएगा और न्यायपालिका का नाम और इज्जत धूमिल हो जाएगी[64]। जब किसी वादी या वकील को किसी जज को अपने पक्ष में फैसला देने के लिये प्रभावित करने की अनुमति दी जाएगी तो न्याय प्रशासन अपने आप में एक अभिशाप बन जाएगा और कानून का शासन विफल हो जाएगा। जज को अपना काम बिना किसी डर के इस तरह से करना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति उसे अपने पक्ष में आदेश देने के लिये आतंकित या भयभीत नहीं कर सके। किसी भी सभ्य न्यायिक प्रशासनिक व्यवस्था में ऐसा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

4.2 उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों को अवमानना के मामलों में दण्ड देने की शक्ति संविधान एवं अधिनियम के तहत प्रदान की गई है वह अपने आप में विशेष और दुर्लभ है। यह एक प्रबल शक्ति है यदि इसका गलत तरीके से उपयोग किया जाए तो यह किसी व्यक्ति के ऊपर अदालत की अवमानना का आरोप लगाकर उसकी वैयक्तिक स्वतंत्रता को नियंत्रित कर सकता है। ये शक्तियां अदालतों का पवित्र कर्तव्य निर्धारित करती हैं कि वे इनका उपयोग अतिसावधानी एवं आवश्यक होने पर ही करें। यह भी आवश्यक है, अधिकाशंतः अवमानना याचिका के फैसले के मामले में यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि दोषी व्यक्ति के ऊपर इस आदेश का क्या प्रभाव पडेगा। अदालतों को ऐसे मामलों में दिये जाने वाले अपने आदेशों में उन चार बिन्दुओं की सीमा रेखा को पार नहीं करना चाहिए जिनका तथाकथित तौर पर उल्लघंन किया गया है या उन प्रश्नों के चक्कर में नहीं पडना चाहिए जिनका कि इस मामले से कोई संबंध नहीं हो या उल्लंघन के आरोपी पर न्यायिक प्रक्रिया के निर्णय में फैसला किया गया हो। ऐसे मामलों में यह पता लगाने के लिये कि क्या अवमानना जान बूझकर की गई है या अनजाने में ऐसा किया गया है, सिर्फ उन्हीं आरोपों पर विचार किया जाना चाहिए जो कि सुस्पष्ट या आम तौर पर बिना प्रमाण के सिद्द किये जा सकते हों। जिन मामलों पर निर्णय दिया जा चुका है उन पर न तो दुबारा से सुनवाई की जा सकती है और

नहीं न्यायसम्य याचिका पर विचार किया जा सकता है। अदालतों को अवमानना के मामलों की सुनवाई करते समय यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि अदालत के पास जो सुधारात्मक क्षेत्राधिकार जैसे पुर्नविचार या अपील की शक्तियों पर कोई अतिक्रमण नहीं हो। अदालत की अवमानना के मामले में प्राप्त शक्तियों का उपयोग करते समय पहले से निर्णित किसी भी मामले में अदालत के द्वारा कोई भी पूरक दिशा निर्देश या आदेश नहीं दिया जा सकता है; इस तरह की कार्रवाई अदालत के अन्य प्रकार के न्यायधिकारक्षेत्र के लिये उपयुक्त हैं।[66]

63 आर.के.गर्ग बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, एआईआर 1981 एससी 1382; और महिपाल सिंह राना बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 2016 एससी 3302।

64 एम.बी.संघी, वकील बनाम हरियाणा एवं पंजाब राज्य, एआईआर 1991 एससी 1834

65 एल.डी. जाईकवाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 1984 एससी 1374; मैसर्स चेतक निर्माण लिमटेड बनाम ओम प्रकाश एवं अन्य, एआईआर 1998 एससी 185; राधा मोहन लाल बनाम राजस्थान उच्च न्यायालय, एआईआर 2003 एससी 1467; और अरुण कुमार यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2013) 14 एससीसी 127।

66 झारेश्वर प्रसाद पॉल बनाम तारक नाथ गांगुली, एआईआर 2002 एससी 2215; वी.एम. मनोहर प्रसाद बनाम एन.रतनाम राजू (2004) 13 एससीसी 610; बिहार फाईनेन्स सेवा एच.सी सहकारी सोसायटी लिमटेड बनाम गौतम गोस्वामी एवं अन्य, एआईआर 2008 एससी 1975; भारत संघ एवं अन्य बनाम सुबेदार देवासी पीवी, एआईआर 2006 एससी 909 ; और सुधीर वासुदेव एवं अन्य बनाम एम. जोर्ज रविशेखरन एवं अन्य, एआईआर 2014 एससी 950।

4.3 उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि अदालत के किसी भी अन्तिम आदेश की अवेहलना करना और/या अदालत में किये गये किसी भी वादे से मुकरना न्यायिक दुर्भावना और मनमानी के साथ अदालत की अवमानना माना जाएगा क्योंकि अदालतों के द्वारा दिये गये अन्तिम निर्णयों पर संवीक्षा नहीं की जा सकती है।[67]

4.4 उच्चतम न्यायालय ने उच्चतम न्यायालय बार ऐसोसिऐशन (उपर्युक्त) के मामले में स्थापित अदालत की अवमानना के लिये सजा पर विचार करते हुए कहा:

रिकॉर्ड अदालतें अवमानना के मामले में जिन शक्तियों का उपयोग दंडित करने के लिये करती हैं वे उनके अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का एक हिस्सा है और यह अदालतों को न्याय को प्रशासित करने के लिए नियमित, व्यवस्थित और प्रभावी कानून के तौर तरीकों के अनुसार चलाने के लिये अदालतों को सक्षम बनाने के लिए आवश्यक है..... । <u>अवमानना की शक्तियों का उद्देश्य अदालतों की महिमा और गरिमा को बनाए रखना है।</u> [जोर देकर कहा गया]

4.5 *लीला डेविड* बनाम *महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य,* एआईआर 200 एससी 3272 के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि अवमानना के कानून के आधार सामान्य न्यायिक सिद्धांतों पर आधारित न होकर बल्कि इसके लिये विशेष अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार विनियमित होते हैं। न्यायालय ने पाया कि "उक्त *अधिनियम के तहत प्रदान की गई शक्तियों के अलावा स्वंय की अवमानना के मामले में दण्डित करने के लिये संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत अंतर्निहित शक्तियां अदालतों को प्रदान की गई है।"* अदालत ने आगे कहा कि संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत भी किसी अवमानना के दोषी व्यक्ति को सजा देने की शक्ति अदालतों को प्रदान की गई है। [यह भी देखें: *सीके दफ्तरी* बनाम *ओ.पी. गुप्ता एवं अन्य*, एआईआर 1971 एससी 1132]

67 भारत संघ एवं अन्य बनाम अशोक कुमार अग्रवाल, (2013) 16 एससीसी 147।

4.6 *विश्राम सिंह रघुवंशी* बनाम *यूपी राज्य,* एआईआर 2011 एससी 2275, के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने दोहराया कि अदालतों को अवमानना की शक्तियां अदालतों के सम्मान और गरिमा को बनाए रखने के लिये प्रदान की गई हैं क्यों कि किसी को भी अदालतों के सम्मान और गरिमा को ठेस पहुंचाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। न्यायालय ने इस मामले में कहा:

"उच्चतर अदालतों का यह कर्तव्य है कि वे अपने अधीनस्थ अदालतों के अधिकारियों के सम्मान की रक्षा करें, बेईमान वकीलों के द्वारा वांछित आदेश प्राप्त करने में विफल होने या गलत उद्देश्यों की पूर्ती न करवाने पर अधीनस्थ अदालतों के न्यायिक अधिकारियों की प्रतिष्ठा को बदनाम करने की बढ़ती प्रवृत्ति पर संज्ञान लेना चाहिए। इस तरह के मामले न केवल न्यायपालिका की स्वतंत्रता प्रभावित होती है बल्कि पूरी तरह से संस्थान की प्रतिष्ठा की सुरक्षा पर सवालिया निशान लग जाता है। "

4.7 *रूस्तम कौसजी कूपर* बनाम *यूनियन ऑफ इंडिया,* एआईआर 1970 एससी 1318 के मामले में सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ ने कहा:

"*हम यह कहने के लिए बाध्य होना पड रहा है कि इस अदालत या किसी अन्य अदालत की निष्पक्ष और संकोची तरीके से आलोचना यदि मजबूत तरीके से की जाती है तो ऐसे कृत्य पर कार्रवाई की जा सकती है, अनुचित उद्देश्यों को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, या न्यायाधीशों या अदालतों के प्रति नफरत का भाव फैलाने और अदालतों के कामकाज में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से बाधा डालना गंभीर अवमानना है जिस पर संज्ञान अवश्य ही लिया जाना चाहिए और लिया भी जाएगा। सम्मान की उम्मीद न केवल उन व्यक्तियों से की जानी चाहिए जिनको अदालत के निर्णय को स्वीकार करना है बल्कि उन लोगों से भी जिनके प्रति यह निर्णय प्रतिकूल है। जो लोग न्यायिक संस्थान, न्यायिक प्रशासन और उन माध्यमों जिनके द्वारा प्रशासनिक उत्तरदायित्वों का निर्वाहन किया जाता है की आलोचना करने की गलती करते हैं उनको ध्यान रखना चाहिए क्योंकि इस तरह का कृत्य उनके लिये हानिकारक होगा।* "

4.8 अवमानना के लिए दंडित करने की शक्ति अपने आप में विशिष्ठ एंव दुर्लभ न्यायिक शक्ति है जिसका उपयोग बहुत ही सावधानी और सतर्कता से करना चाहिए। इस तरह की शक्ति का प्रयोग केवल तब किया जाना चाहिए जब "कोई भी विकल्प नहीं बचे।"

4.9 न्यायाधीश या अदालत के घृणास्पद आरोप लगाना, या न्यायाधीश के व्यक्तिगत चरित्र पर हमला करना दंडनीय अवमानना हैं। इस प्रकार के व्यवहार जिस से अदालत की गरिमा को ठेस पहुंचती हो या अदालत के अधिकारों का हनन होता हो को रोकने के लिए सजा दी जाती है। यही कारण है कि अदालत इस प्रकार के अदालत या जज पर लगाए गये पक्षपात के आरोपों के साथ गंभीरता से निपटती है।[68]

4.10 *ईएम शंकरन नंबूद्रीपाद (उपर्युक्त)* के मामले में, अदालत ने कुछ अभिव्यक्तियों को निर्धारित किया है जैसे 'न्यायपालिका के वर्णन के रूप में उत्पीड़न का साधन, न्यायाधीशों को निर्देशित और अधिकारत्व के रूप में वर्ग विशेष से नफरत' और 'स्वाभाविक रूप से गरीबों के विरुद्द अमीरों के पक्ष में पक्षपात करना' अदालत की अवमानना के समान हैं।

---

68 *सी. रविचंद्रन अय्यर* बनाम *न्यायमूर्ति ए.एम भट्टाचार्य और अन्य,* (1995) 5 एससीसी 457; *पुन: विनय चंद्र मिश्रा,* एआईआर 1995 एससी 2348; *पुन: अरुंधरी रॉय,* (2002) 3 एससीसी 343।

4.11 *चंद्र शशी* बनाम *अनिल कुमार वर्मा*, (1995) 1 एससीसी 421 के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि "*यदि झूठ का सहारा किसी परोक्ष उद्देश्य के लिये किया जाता है तो उस से निश्चित रुप से न्यायिक प्रक्रिया में बाधा, रुकावट या व्यवधान पैदा होगा यहां तक कि यह न्याय के प्रवाह के साथ साथ उन क्रिया कलापों को भी प्रभावित करेगा जिनको करना एक अदालत से अपेक्षित है।*"

4.12 *पुन: बिनीत कुमार सिंह (उपर्युक्त)*, के मामले में उच्चतम न्यायालय के आदेश की एक जाली / निर्मित आदेश की प्रति कुछ लोगों को लाभ पहुंचाने के लिये उपयोग की गई थी। सुप्रीम कोर्ट ने इस मामले में सख्त दृष्टिकोण अपनाते हुए कहा कि "*अदालत की अवमानना का कानून का निर्माण न्याय प्रशासन को अनिवार्य रूप से शुद्ध और निर्मल बनाए रखने के लिये किया गया था* "।

4.13 कानून की पवित्रता अदालत की गरिमा के कारण होती है और इसे किसी भी वकील या याचिकाकर्ता को ग़लत व्यवहार से इसका हनन करने की इजाजत नहीं दी जा सकती है [69]। सुप्रीम कोर्ट ने *संजीव दत्ता, उप सचिव, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय*, (1995) 3 एससीसी 619, के मामले में एक वकील के द्वारा अपूर्ण और गलत याचिका के संदर्भ में ग़लत व्यवहार के मुद्दे पर कहा:

"*इस पेशे के कुछ सदस्यों ने इस पेशे के प्रति लापरवाही का रवैया अपना लिया है जैसा कि स्पष्ट है उनकी अनुपस्थिति में जब मामले पर सुनवाई की जाती है तो पाया जाता है कि याचिकाओं में गलत एवं अधूरी जानकारी दी गई होती है और कई बार यह अपठनीय और व्यक्तिगत जांच और सत्यापन के बिना, अदालत शुल्क और प्रक्रिया शुल्क के भुगतान के बिना, कार्यालय की आपत्तियों को हटाए बिना, अपने मुअक्किल को सही सेवा प्रदान करने के लिये उचित कदम उठाने में असफल इत्यादि जैसी गंभीर गलतियां की जाती हैं। उन्हें इन कृत्यों और गलतियों की गंभीरता का एहसास नहीं है। इस प्रकार के कृत्य न केवल अदालत की अवमानना के समतुल्य हैं बल्कि याचिकाकर्ताओं के हितों के भी विरुद्द है और इस से कई बार अदालत में शर्मनाक स्थिति बन जाती है और मामलों के निपटारे में अनावश्यक देरी और अप्रिय स्थिति होती है। यह संकेत हमारे न्यायिक तंत्र के स्वास्थ्य को बीमार करने वाले हैं।*"

---

69 *अरुण कुमार यादव* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य जिला। न्यायाधीश*, (2013) 7 स्केल 542।

4.14 न्याय तक पहुंच प्रत्येक व्यकित का महत्वपूर्ण मौलिक एवं मानवाधिकार है। आपराधिक मामलों का शीघ्र निपटान संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के मौलिक अधिकार का अनिवार्य भाग है। उच्चतम न्यायालय ने बार बार, नियमित रुप से और लगातार यह कहा है कि यदि वकील किसी भी कारण से हडताल का सहारा लेते हैं और किसी भी कारण से उक्त अधिकार का हनन होता है तो ऐसी हडतालें हमेशा ही गैर कानूनी मानी जाएंगी (एम.एच.होस्केट बनाम महाराष्ट्र राज्य, एआईआर 1975, एससी 1548; *हुसैनारा खातून* बनाम *गृह सचिव, बिहार राज्य* , एआईआर 1979 एससी 1360; *महाराष्ट्र* राज्य बनाम चम्पा*लाल पुंजाजी शाह* , एआईआर 1981 एससी 1675;*रुदल शाह* बनाम *बिहार राज्य एवं अन्य* , एआईआर 1983 एससी 1086; *किशोर चंद* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य* , एआईआर 1990 एससी 2140; *मोसेस विल्सन एवं अन्य* बनाम *कस्तुरिबा और अन्य* , एआईआर 2008 एससी 379; *भारतीय जीवन बीमा निगम बनाम आर. सुरेश* (2008) 11 एससीसी 319; *वकील प्रसाद सिंह* बनाम *बिहार राज्य*, एआईआर 200 एससी 1822; *तमिलनाडू मर्कैंटाइल बैंक शेयर होल्डर कल्याण संघ* (7) बनाम *एस.सी शेखर और अन्य* , (2009) 2एससीसी 784; और *बाबूभाई भीमाबाई बोखरिया* बनाम *गुजरात राज्य* ,एआईआर 2013 एससी 3648)

4.15 इसी तरह, *हुसैन* बनाम भारतीय सं*घ एवं अन्य*, एआईआर 2017 एससी 1362, *के मामले में* न्याय में हस्तक्षेप के मुद्दे पर सुप्रीम कोर्ट ने उच्च न्यायालयों को ऐसे दोषी वकीलों के खिलाफ कठोर कार्रवाई करने के लिये निर्देशित किया जो कि अदालतों के द्वारा समय समय पर दीये गये दिया निर्देशों का उल्लघंन करते है और बार बार हडताल पर जाते हैं क्योंकि, "... त्वरित न्याय में अवरोध से आम जन का *न्याय प्रशासन में विश्वास कम होता है।* "

4.16 हाल ही में 28 मार्च, 2018 को सुप्रीम कोर्ट में आपराधिक अपील सं.70, *कृष्णकांत तमकार* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य* के मामले में न्याय तक पहुंच के अधिकार के उल्लंघन के मुद्दे पर कहा कि वकीलों के द्वारा हडताल पर जाने का संकल्प लेना और अपने काम से अनुपस्थित रहना भी अदालत की अवमानना के बराबर है और इसलिये यह मामला भी इस अदालत के अन्तर्निहित न्यायधिकारक्षेत्र के अन्तर्गत आता है। अदालत ने कहा कि ऐसे मामलों में जिन बार ऐशोसिएशन/बार काऊन्सिल के पदाधिकारियों ने हडताल का आह्वान किया है उनको किसी भी अदालत के समक्ष उपस्थित होने पर विशेष समय की अवधि के लिये प्रतिबंध लगाया जा सकता है या जब तक अवमानना के मामले में वे स्वय उपयुक्त वचनबद्दता या शर्तों के आधार पर संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायधीश के सन्तुष्ट होने तक अपने द्वारा किये गये कृत्य के लिये माफी मांग लें। अदालत ने अपने आदेश में भारत के विधि आयोग की रिपोर्ट संख्या 266 के वकील अधिनियम, 1961 (कानूनी व्यवसाय का विनियम)

का जिक्र करते हुए कहा कि वकीलों के द्वारा किया गया ऐसा व्यवहार न केवल न्यायिक कार्य को प्रभावित करता है बल्कि न्यायिक मामलों को लम्बित रखता है।

4.17 ऐसा कहे जाने के बाद यहां भी ध्यान देना चाहिए कि उच्चतम न्यायाालय ने केवल निन्दा या जज को बदनाम करना और अदालत की अवमानना करना या किसी जज को अपने काम के बारे में प्रभावित करने के बारे में स्पष्ट भेद करते हुये बताया है "जज के साथ चाहे निजी तौर पर या सार्वजनिक तौर कुछ भी गलत पर किया गया हो"[70] इस पर आगे व्याख्या करते हुए बरदाकांत मिश्रा बनाम कुलसचिव, उडीसा उच्च न्यायालय एवं अन्य एआईआर 1974, एससी 710 के मामले में अदालत ने स्पष्ट करते हुए कहा:

"महत्वपूर्ण शब्द "न्याय" है न कि "न्यायाधीश", महत्वपूर्ण विचार "आमजन को निर्बाध न्याय" देना है न कि किसी जज की आत्म रक्षा करना; अवमानना के कानून का प्रमुख आधार दो प्रमुख संवैधानिक मूल्यों की रक्षा करना है -अभिव्यक्ति की आजादी और स्वतंत्र न्याय का अधिकार। अवमानना के मामलों में की गई कार्रवाई ठोस एवं बदनियत हस्तक्षेप के साथ निर्भिक न्यायिक कार्रवाई होनी चाहिए न कि निष्पक्ष टिप्पणी या न्यायिक प्रक्रिया या न्यायिक कार्मिकों पर तुक्ष्य प्रभाव" ।

4.18 यहां तक कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अदालत की निन्दा या किसी जज को बदनाम करना और अदालत की अवमानना के बीच में स्पष्ट भेद किया गया है। उदाहरण के लिये अमेरिका में उच्चतम न्यायालय ने क्रेग बनाम हारने 331 यूएस 367 (1947) के मामले में यह महसूस किया और बताया "अवमानना का कानून किसी जज की सुरक्षा के लिये नहीं बनाया गया है क्यों कि जज किसी मामले की सुनवाई के दौरान जन आकाक्षांओं से प्रभाावित हो सकता है। न्यायधीशों से यह आशा की जाती है कि वे विशेषकर चुनौतिपूर्ण परिस्थितियों में सहासी बने ।"

---

70 पर्सपेक्टिव प्रकाशन प्राईवेट लिमटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य, एआईआर 1971 एससी 221; और गोबिन्द राम बनाम महाराष्ट्र राज्य,एआईआर 1972 एससी 989।

अध्याय -5

आपराधिक अवमानना

5.1 अदालत की शक्तियों, न्याय, और गरिमा के विरुद्द किया गया कृत्य आपराधिक अवमानना कहलाता है। इसको "अदालत की शक्तियों और गरिमा के विरुद्द किया गया कृत्य"[71] के रुप में परिभाषित किया जा सकता है।

5.2 आपराधिक अवमानना उस कृत्य का प्रतीक है जिसकी वजह से अदालत या न्यायिक प्रशासन की बदनामी होती है। उच्चतम न्यायालय ने यह भी कहा है "किसी भी जज को एक जज के रुप में यहां तक कि पूर्ण रुप से प्रशासनिक या गैर-न्यायकि मामलों के लिये गाली गलौच करना आपराधिक अवमानना की श्रेणी में आता है।"[72]

5.3 आपराधिक अवमानना की श्रेणी में अवज्ञाकारी कृत्यों के कई प्रकार शामिल होते हैं। "किसी भी जज या अदालत को उसके न्यायिक कार्य के संबंध में प्रभावित करना उनमें से एक है। अवमानना के प्रमुख प्रकार किसी भी जज का अपमान करना, उन पर आक्रमण करना, किसी भी लम्बित कार्यवाही पर निष्पक्ष सुनवाई को प्रभावित करने के उद्देश्य से टिप्पणी करना, किसी भी न्यायिक अधिकारी, गवाह या वादी के पक्ष में व्यवधान डालना, अदालती प्रक्रियाओं की आलोचना करना, न्यायालय से संबंधित अधिकारियों के द्वारा अपने कर्तव्यों का उल्लघंन करना और अदालत या जज को प्रभावित करना है।" अन्तिम प्रकार की अवमानना सामान्य तौर पर तब मानी जाती है जब कोई व्यक्ति अपने कृत्यों के द्वारा किसी अदालत या न्यायिक प्रशासन की गरिमा या सम्मान से खिलवाड करता है। इसमें वे सभी कृत्य आते हैं जिस से किसी अदालत की बदनामी या अपमान होता है या इसके सम्मान से खिलवाड, वैभव का अपमान और / या शक्तियों को चुनौती देता है। इस प्रकार की अवमानना किसी एक जज या एक अदालत के संबंध में की जा सकती है लेकिन कभी कभी कुछ विशेष परिस्थितियों में सम्पूर्ण न्यायपालिका या न्यायिक व्यवस्था के संबंध में भी हो सकती है।[73]"

---

[71] पी.रामनाथन अय्यर, वृहत कानूनी शब्दकोष, (चौथा संस्करण, 2010) खण्ड II, लेक्सिस नेक्सिस,

[72] बरदाकांत मिश्रा बनाम भीमसेन दीक्षीत, एआईआर 1972 एससी, 2466।

[73] ई.एम शंकरन नंबूदरीपाद बनाम टी. नारायणन नांबियार, एआईआर 1970 एससीसी 2015।

5.4 हरि सिंह नागरा एवं अन्य बनाम कपिल सिब्बल एवं अन्य, (2010), 780 एससीसी 502 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने 'अदालत को प्रभावित करना' पद की व्याख्या करते हुए निम्न तरीके से कहा:

"किसी भी जज को अकेले या न्यायालय को प्रभावित करना अपने आप में संपूर्ण न्यायिक प्रक्रिया पर हमला है, किसी विशेष मामले का उल्लेख करते हुए या ना करते हुए अदालतों पर आरोप लगाना न्यायाधीशों की काबिलियत और चरित्र पर बदनामी का कलंक है। अदालत को प्रभावित करना किसी भी प्रकाशन के द्वारा बहुत ही आसान है जो कि हालांकि यह किसी भी विशेष मामले या किसी पूर्व मामले या किसी लंबित मामले या किसी विशेष जज से संबंधित नहीं होता है, यह न्यायपालिका पर एक झूठा और अपमानजनक हमला है जिसका उद्देश्य अदालतों की गरिमा को नुकसान पहुंचाना तथा न्यायिक प्रक्रिया में आमजन के विश्वास को घटाना है।"

5.5 अमित चंचल झां बनाम पंजीयक, दिल्ली उच्च न्यायालय (2015) 13 एससीसी 288, के मामले में एक महिला वकील को तथा कथित रूप से विपक्षी वकील के द्वारा थप्पड़ मारा गया और गाली गलौज की गई, इस पर अदालत ने कहा कि अदालत में न्यायिक कार्यवाही के दौरान किसी अन्य वकील के द्वारा किया गया ऐसा कृत्य आपराधिक अवमानना की श्रेणी में आता है।

5.6 सुखदेव सिंह (उपर्युक्त), उच्चतम अदालत ने एन्ड्रये पोल टेरेन्स अम्बार्ड बनाम त्रिनिदाद टोबैगो के महाधिवक्ता, एआईआर 1936 पीसी 141 के मामले में प्रीवी परिषद के फैसले पर विश्वास व्यक्त करते हुए कहा कि अदालत की अवमानना के मामले में की गई कार्यवाहियों की प्रकृति अर्ध आपराधिक हैं, और इसलिए ऐसे मामलों में दिये गए आदेशों को आपराधिक मामलों में पास किए गए आदेशों के बराबर ही माना जाना चाहिए।

5.7 रामकृष्ण बनाम श्री तरुण बजाज एवं अन्य, 2014 16 एसीसी 204, के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अवमानना के तहत की गई कार्यवाहियों का उद्देश्य कानून की अदालतों का सम्मान एवं उनकी गरिमा को लोकतांत्रिक समाज में बनाए रखना है।

5.8 आपराधिक अवमानना के मामले में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय ने नियमित रूप से कहा है कि आपराधिक अवमानना की कार्यवाहियों की प्रकृति अर्ध-आपराधिक होती है तथा इसमें भी सबूतों के वही मानक अपनाए जाने चाहिए जो कि अन्य आपराधिक मामलों में अपनाए जाते हैं।[74] सहदेव सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, (2010) 380 एससीसी 705 के मामले में उच्चतम न्यायालय यह पुष्टि करता है कि उच्च न्यायालय स्वयं आपराधिक अवमानना के मामले में कार्यवाही शुरू करने का संज्ञान ले सकते हैं, एक बार फिर इस बात पर जोर देते हुए कि आम आपराधिक मामलों में जो सबूतों के मानक अपनाए गए हैं उन सभी मानकों का पालन आपराधिक अवमानना के मामलों में भी किया जाना चाहिए। अशोक कुमार अग्रवाल बनाम नीरज कुमार एवं अन्य 2014 380 एससीसी 602, के मामले में अदालत ने आगे कहा है कि आपराधिक अवमानना के मामले में की गई कार्यवाही बिना किसी संदेह के की जानी चाहिए।

क. झूठा शपथ पत्र

5.9 झूठे शपथ पत्र को भी सकारात्मक अभिकथन माना जाता है, यह एक निश्चित और विशेष उद्देश्य के लिये बनाया जाता है और इस का उपयोग संभवत: अनुचित लाभ प्राप्त करने के लिए भी किया जाता है।[75] यदि अदालत में पेश किया गया कोई भी शपथ पत्र झूठा है तो इसे अदालती कार्यवाही और न्यायिक प्रशासन में बाधा तथा अनुचित हस्तक्षेप माना जाएगा, क्योंकि न्यायधीश झूटे शपथ पत्र के आधार पर गलत निर्णय/ आदेश दे सकता है। उच्चतम न्यायालय ने यह कहा है कि किसी भी अदालत में झूठा शपथ पत्र देना आपराधिक अवमानना की श्रेणी में आता है।[76]

---

74 *एस अब्दुल क्रिम* बनाम *एम.के. प्रेकाश,* एआईआर 1976 एससी 859; *छोटू राम* बनाम *उर्वशी गुलाटी और अन्य*। (2001) 7 एससीसी 530; *अनिल रतन सरकार और अन्य* बनाम *हिरक घोष एवं अन्य,* एआईआर 2002 एससी 1405; *दरोगा सिंह और अन्य* बनाम *बी.के पांडे,* एआईआर 2004 एससी 2579; *अखिल भारतीय अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कझागम* बनाम *एल.के त्रिपाठी और अन्य*, एआईआर 2009 एससी 1314; *आरएस सुजाता* बनाम *कर्नाटक राज्य*, (2011) 5 एससीसी 689; और *अशोक कुमार अग्रवाल* बनाम *नीरज कुमार और अन्य*, (2014) 3 एससीसी 602।

75 *मरे और कं* बनाम *अशोक कुमार नेवतिया और अन्य,* आईआर 2000 एससी 833।

76 देखें: एम.सी मेहता बनाम भारतीय संघ एवं अन्य एआईआर 2003 एससी 3469।

5.10 धनंजय शर्मा बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य, एआईआर 1995 एससी, 1795 के मामले में झूठे हलफनामे को अदालत के समक्ष रखने के मामले को गंभीरता से लिया और कहा कि इस प्रकार का कृत्य कानून के नियम के विरुद्ध है और इसे क्षमा नहीं किया जा सकता क्योंकि इससे न्यायिक प्रशासन में आम जनता के विश्वास को चोट पहुंचती है और कहा:

अदालती कार्यवाही के दौरान झूठे हलफनामा प्रस्तुत करना ना केवल न्यायिक कार्यवाही में बाधा डालना है बल्कि न्यायिक प्रशासन में हस्तक्षेप या बाधा या रुकावट है। किसी भी अदालत में न्यायिक प्रक्रिया के दौरान झूठा शपथ पत्र दायर करना संबंधित पार्टी के द्वारा न्यायिक प्रक्रिया को प्रभावित करने के इरादों को बेनकाब करता है। किसी भी न्यायिक प्रक्रिया को इस प्रकार की कृत्यों और व्यवहार के द्वारा प्रभावित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और ना ही न्याय की गरिमा का मजाक बनाने दिया जा सकता है चाहे वह पार्टियों का परिवाद हो या किसी गवाह के रूप में न्यायालय में उपस्थित होना। कोई भी व्यक्ति न्यायिक कार्यवाही के दौरान झूठा शपथ पत्र दायर कर बाधित करता है, या न्यायिक प्रशासन की गरिमा को हानि पहुंचाता है या न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करता है, उस पर अदालत की आपराधिक अवमानना के तहत कार्यवाही की जानी चाहिए और उसके विरुद्ध अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार कार्यवाही की जानी चाहिए। (जोर देते हुए कहा)

5.11 मोहन सिंह बनाम परिवाद के माध्यम से अमर सिंह, एआईआर 1999, एससी 482 के मामले में अदालत में प्रस्तुत किए गए झूठे शपथ पत्र के मामले में अदालत ने अपीलकर्ता के विरुद्ध आपराधिक अवमानना की कार्यवाही शुरू करने के निर्देश देते हुए कहा कि न्यायिक प्रक्रिया के रिकॉर्ड के साथ छेड़छाड़ और किसी भी अदालत में झूठा हलफनामा या शपथ पत्र देना न्याय की नित्य प्रक्रिया को बाधित करने के समान है।

5.12 सचिव, हेकांडी वकील परिषद बनाम असम राज्य एवं अन्य, एआईआर 1996 एससी 1925 के मामले में उच्चतम न्यायालय इस नतीजे पर पहुंचा कि झूठा शपथ पत्र अदालत में दायर करना अदालत की अवमानना के समान हैं। यदि एक पुलिस अधिकारी जानबूझकर एक गलत रिपोर्ट झूठा शपथ पत्र के साथ अदालत में पेश करता है ताकि अदालत को गुमराह किया जा सके और इस प्रकार से न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप कर अदालत को सही निर्णय लेने से रोकता है तो उसे दण्डित करना आवश्यक है। उच्चतम न्यायालय ने इस तरह के मामलों को गंभीरता से लिया तथा कहा कि इस तरह के कृत्यों को हल्के में नहीं लिया जा सकता तथा झूठे दस्तावेज पेश करना और उन्हें अदालत के रिकॉर्ड के एक भाग के रूप में रखना एक गंभीर चिंता का विषय है।[77]

77 अफजल एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य, 1994 (एसीसी) 425, और मुर्रे एवं कंपनी बनाम अशोक कुमार नेवतिया, एआईआर 2000 एससी 833; बैंक ऑफ इंडिया बनाम विजय ट्रांसपोर्ट एवं अन्य, (2000) एसएसी 512 भी देखें

5.13 महाधिवक्ता, बिहार राज्य बनाम मध्य प्रदेश खैर उद्योग एवं अन्य, एआईआर 1980 एससी 946 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अपना मत व्यक्त करते हुए कहा:

"जबकि हम जागरूक हैं कि अदालत की प्रत्येक कार्यवाही का दुरुपयोग आवश्यक रूप से अदालत की अवमानना के समतुल्य नहीं हो सकता है, किसी भी न्यायिक प्रक्रिया को हानि पहुंचाने के लिए किसी भी अदालत की कार्यवाही का दुरुपयोग करना या न्यायिक प्रशासन को गुमराह करना आवश्यक रूप से अदालत की अवमानना कहलाता है ..... यहां पर यह आवश्यक हो जाता है कि अदालत की अवमानना के मामले में किसी भी न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग करना और न्यायिक प्रक्रिया का मजाक बनाने के दुष्कृत्य को सजा देना आवश्यक है .....यह अदालतों का कर्तव्य है कि वह न्यायिक प्रशासन में आमजन के हितों की रक्षा करे। इसलिए अदालत को अवमानना के मामलों में जो शक्तियां सौंपी गई हैं वह ना केवल बदनामी और अपमान के विरुद्ध न्यायालय की गरिमा और सम्मान की रक्षा करने के लिए हैं बल्कि न्यायिक प्रशासन में आम जनता के विश्वास को बनाए रखने एवं उसकी रक्षा करने के लिए भी है ताकि न्यायिक प्रशासन को किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह, प्रतिबंध, बाधा एवं हस्तक्षेप से मुक्त रखा जा सके" (जोर देकर कहा)

ख. पूर्व स्पष्ट अवमानना

5.14 संविधान में विशेष रूप से यह प्रावधान किया गया है कि उच्चतम न्यायालय का आदेश ही देश का कानून का आधार है। कोई भी व्यक्ति यदि इन आदेशों का उल्लंघन करता है तो यह स्पष्ट रूप से अदालत की अवमानना मानी जाएगी। महाधिवक्ता, बिहार राज्य बनाम मैसर्स मध्य प्रदेश खैर उद्योग एआईआर 1980 एससी 94, के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा "न्यायपालिका ही न्यायिक सिद्धांत के मूल तत्व हैं और व्यवस्थित जीवन और सभ्य समाज की सेविका है। यदि लोगों का विश्वास देश के उच्चतम न्यायालय में खत्म हो जाएगा तो यह व्यवस्थित जीवन और सभ्य समाज के लिए बहुत बड़ा आघात होगा और सभ्य समाज का ढांचा टूट कर बिखर जाएगा"

5.15 दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्कीपर कंस्ट्रक्शन कंपनी (प्राइवेट) लिमिटेड एवं अन्य (उपर्युक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने प्रतिवादी के द्वारा की गई अवमानना के मामले को गंभीरता से लेते हुए कहा कि अवमानना के मामले में माफी मांगकर बचना कोई हल नहीं हो सकता है और अवमाननाकर्ता का व्यवहार कानून की गरिमा एवं कानून के प्रशासन की शक्तियों के विरुद्ध था ..... न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग, न्यायिक कार्यवाही के साथ छेड़छाड़ करना और न्यायिक प्रशासन के व्यवस्थित काम में बाधा डालना अदालत की अवमानना कहलाता है"

5.16 आगे श्रीबर्दाकांत मिश्रा बनाम कुलसचिव, उड़ीसा उच्च न्यायालय एवं अन्य (उपर्युक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा

"न्यायाधीशों एवं अदालतों के विभिन्न कर्तव्य होते हैं लेकिन कार्यकारी रूप से, ऐतिहासिक रूप से और कानूनी मनोवैज्ञानिक रूप से जिन मूल्यों का महत्व समाज के लिये है और आमजन की समस्याओं को हल करना ही न्यायिक दायित्व है। न्यायाधीशों के व्यक्तिगत एवं प्रशासनिक कार्यों की दोषपूर्ण आलोचना अप्रत्यक्ष रुप से उनके सम्मान को ठेस पहुंचा सकती है और केवल अभिव्यक्ति की आजादी ही नहीं बल्कि सत्य के प्रकाश के आधार पर न्यायपालिका में जन्मे आम जनता के गहरे विश्वास पर चोट पहुंच सकती है इसलिये यहां तक के मामूली ईर्ष्या से परिपूर्ण आलोचना को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।"

5.17 डॉक्टर डी.पी. सक्सेना बनाम माननीय भारत के मुख्य न्यायाधीश 1996 एससी 481 के मामले में अदालत ने तत्कालीन भारत के मुख्य न्यायाधीश पर लगाए गए आरोपकर्ता के आरोपों को गंभीरता से लिया जिसमें उच्चतम न्यायालय के आदेश का उल्लंघन एक याचिका दायर करके किया गया था। अदालत ने कहा कि "कोई भी कृत्य या प्रकाशन जो कि किसी जज या अदालत की अवमानना करता है या न्यायपालिका की गरिमा को ठेस पहुंचाता है या न्यायिक कार्यवाही में बाधा डालता है आपराधिक अवमानना कहलाता है: किसी भी अदालत या जज के ऊपर मनगढ़न्त झूठे आरोप लगाना या उनके व्यक्तिगत चरित्र पर हमला करना अवमानना की श्रेणी में आता है।

ग. अदालत के निर्णय / आदेशों की गैर अनुपालना

5.18 न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करना या उस में बाधा डालना साधारणत: आपराधिक अवमानना की श्रेणी में शामिल किया जाता है तथा इसमें वह कृत्य भी शामिल है जिसकी वजह से अदालत के किसी निर्णय या आदेश की मनमानी रूप से व्याख्या करना या उसका पालन न करना भी शामिल है।

5.19 पूर्ववर्ती पर जोर देते हुए, उच्च न्यायालय ने रिलायंस पेट्रोल केमिकल्स लिमिटेड बनाम इंडियन एक्सप्रेस न्यूज़ पेपर, मुंबई प्राइवेट लिमिटेड के प्रोप्राइटर एवं अन्य, एआईआर 1989 एससी 190 के मामले में कहा "जनहित में यह आवश्यक है कि न्यायिक प्रक्रिया में कोई भी हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए और न्यायिक निर्णय पर किसी भी प्रकार का पूर्व निर्धारित पूर्वाग्रह या धोखे पर आधारित आम जनता के आवेग या किसी भी प्रकाशन के द्वारा प्रभावित नहीं होना चाहिए। इस मामले में अदालत ने जोर देते हुए मामले के तथ्यों को सत्य के प्रकाश में रखते हुए तथ्यों के मूल्यांकन की महत्ता पर बल दिया, न्यायिक प्रक्रिया को अप्रभावित बनाए रखते हुए अवमानना के प्रश्नों पर विशेष परिस्थितियों में निर्णय दिया जाना चाहिए।

घ. अदालती कार्रवाई की गलत व्याख्या करना

5.20 किसी भी अदालती कार्यवाही के मामले में मौखिक या लिखित रूप में उसकी गलत व्याख्या करना या आम जनता के मन में किसी पार्टी के पक्ष में या विरोध में पूर्वाग्रह उत्पन्न करना अदालत की अवमानना की श्रेणी में आता है। पी.सी.सेन, एआईआर 1970 एससी 821 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अवमाननाकर्ता की मंशा का प्रश्न नहीं है बल्कि इसके के पीछे न्याय के प्रशासन मे हस्तक्षेप करना या न्यायिक प्रक्रिया पर पडने वाले हानिकारक प्रभावों का है।" किसी भी विचाराधीन सुनवाई को प्रभावित करने के लिए दिया गया कोई भी भाषण या वक्तव्य चाहे वह अपराधिक या दीवानी का मामला हो, गंभीर

अवमानना कहलाती है ..... सभी विचाराधीन कार्यवाहियों पर केवल प्रकाशन के माध्यम से टिप्पणी करना अवमानना नहीं कहलाता है बल्कि ऐसे मामलों में यह देखा जाना चाहिए कि इसके द्वारा क्या न्यायिक प्रक्रिया में कोई हस्तक्षेप किया जा रहा है।"

5.21 आगे, अदालत ने जोर देते हुए कहा कि सभी अदालतों का यह कर्तव्य है कि वे विचाराधीन कार्यवाहियों को पूर्वाग्रह से बचाएं क्योंकि आम जनता के मन में किसी संबंधित व्यक्ति के विरुद्ध पूर्वाग्रह के कारण अदालत के द्वारा दिए जाने वाले अंतिम निर्णय पर "हानिकारक परिणाम" पड सकते हैं।[78]

5.22 अदालती कार्यवाहियों की गलत व्याख्या करने से पडने वाले प्रभावों को द विलियम थॉमस शिपिंग कम्पनी, एच.डब्ल्यू डिल्लों एवं सन्स लिमटेड बनाम द कम्पनी, सर रॉबर्ट थॉमस एवं अन्य (1930) 2 अध्याय 368 के मामलों में अदालत ने यह माना कि किसी भी विचाराधीन सुनवाई से संबंधित पार्टियों के बारे में हानिकारक रूप से गलत व्याख्या करना अदालत की अवमानना के समतुल्य है क्योंकि इसके कारण उन पार्टियों को या तो सुनवाई से हटना पड सकता है या समझौता करना पड सकता है और इससे अच्छे काम के लिए अदालत में आने वाले अच्छे लोगों के मनोबल पर नकारात्मक प्रभाव पडता है और इस प्रकार से न्यायिक प्रक्रिया पर प्रभावित होती है।

78 पी.सी.सेन, (उपर्युक्त)

अध्याय - 6
अवमानना की श्रेणी में क्या शामिल नहीं है।

6.1 1971 के अधिनियम की धारा-13 के अंतर्गत अवमानना के कुछ विशेष मामलों में सजा का प्रावधान नहीं हैं. एक सामान्य दिशा निर्देश के रूप में अपराध के लिए तब तक सजा नहीं दी जा सकती कि जब तक कि अदालत इस बात से संतुष्ट ना हो कि "किये गये कृत्य के कारण न्यायिक प्रक्रिया में कोई बाधा पहुंची है". अधिनियम की धारा 13 जिसे 2006 में संशोधित किया गया था की उप धारा (ख) के अंतर्गत यह प्रावधान किया गया है कि अवमानना के विरुद्ध सत्य तथ्य अदालत के समक्ष रखे जाएं, यदि अदालत संतुष्ट हो जाती है कि जो तथ्य रखे गए हैं वह जनहित में पूर्णरुप से सत्य पर आधारित है।[79]

6.2 एम.वी. जयराजन बनाम केरला उच्च न्यायालय एवं अन्य (2015) 4 एससीसी 81 के मामले में अदालत ने कहा कि अभिव्यक्ति एवं बोलने की आजादी कटु, निंदात्मक एवं गाली गलौचपूर्ण आलोचना के स्थान पर संयमी एवं तर्कपूर्ण आलोचना की मांग करती है। ऐसे अधिकार निश्चित रुप से जनता को प्रत्यक्ष रुप से या कपटपूर्ण तरीके से अदालतों के आदेशों की अवेहलना करने की अनुमति प्रदान नहीं करते हैं। और कोई भी व्यक्ति अदालतों को न्यायपालिका के विरुद्द अभद्र और अपमानजनक भाषा का उपयोग कर प्रभावित नहीं कर सकता है।

6.3 बी.के कार बनाम उड़ीसा उच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश और उनके साथी न्यायाधीश एवं अन्य 1961 एससी 1367 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि यदि अदालत के आदेशों की अनुपालना गलती से, असावधानीपूर्वक या फिर निर्णय के उद्देश्य एवं अर्थ को गलत समझने के कारण नहीं हो पाई है तो ऐसे मामलों में अवमानना के कानून के तहत कार्यवाही नहीं की जा सकती क्योंकि यह पूर्ण रुप से संभव है कि अनाज्ञाकारिता जानबूझकर नहीं की गई हो।

6.4 उच्चतम न्यायालय ने अवमानना के प्रावधानों में संतुलन बनाते हुए कहा है कि परीवादी पार्टी और न्यायिक अधिकारी के बीच में केवल सामाजिक आत्मीयता के आरोप लगाना आपराधिक अवमानना की श्रेणी में नहीं आता है। [गोविंदराम बनाम महाराष्ट्र राज्य,1972 एससी 989]

---

79 सुब्रहण्यम स्वामी बनाम अरुण शौरी, एआईआर 2014 एससी 3020 भी देखें

क. निर्णय / आदेशों की यदि एक से अधिक व्याख्याऐं की जा सकती हों।

6.5 यदि किसी आदेश की व्याख्या एक से अधिक तरीके से की जा सकती हो या उसके भिन्न भिन्न अर्थ निकलते हों तो ऐसे आदेश की गैर अनुपालना की स्थिति में अदालत की अवमानना के कानून के तहत कार्रवाई नहीं की जा सकती है और इसे जान बूझकर आदेश की अवज्ञा नहीं माना जा सकता है। दिनेश कुमार गुप्ता बनाम यूनाईटेड इण्डिया इन्सयोरेन्स कम्पनी लिमटेड एवं अन्य, (2010) 12 एससीसी 770 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने जानबूझकर दीवानी अवमानना के मामले में जोर देते हुए यह कहा कि यदि किसी मामले में गैर अनुपालना हुई है लेकिन यह प्रतित होता हो कि यह जान बूझकर नहीं की गई है तो अवमानना के कानून के तहत कार्रवाई नहीं की जा सकती है।

6.6 मृत्यूंजय दास एवं अन्य बनाम सैय्यद हसीबुर रहमान एवं अन्य, एआईआर 2001 एससी 1293 के मामले में संदेह का लाभ आरोपी अवमाननाकर्ता को अदालत के आदेश की गैर अनुपालना के लिये अदालत के आदेश की दो अलग अलग व्याख्याओं के कारण दिया जिसमें से एक का पालन आरोपी अवमाननाकर्ता ने किया था तथा कहा "अदालत की अवमानना अधिनियम के तहत प्रावधानों को अधिक सावधानीपूर्वक बनाया जाना चाहिए और उनका उपयोग संयम के साथ सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए तथा इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसका प्रभाव अवमाननाकर्ता के ऊपर क्या होगा।"

ख. यदि आदेशों का कार्यान्वयन संभव नहीं हो।

6.7 जब कोई आरोपी अवमाननाकर्ता अदालत में यह सिद्द करे दे कि अदालत के आदेश का पालन करना संभव नहीं है, तो अदालत ऐसे आरोपी को सजा नहीं देगी। (कैप्टन दुष्यंत सोमल बनाम श्रीमती सुष्मा सोमल एवं अन्य, एआईआर 1981 एससी 1026) किसी भी व्यक्ति को तब तक अदालत के आदेश के उल्लंघन के लिये अदालत की अवमानना के तहत कार्रवाई नहीं की जाती है जब तक कि उस पर लगे सारे आरोप बिना किसी संदेह के सिद्द नहीं हो जाते, "सबूत के मानक समान होते हैं, फिर भी आपराधिक कार्यवाहीयां समान नहीं होती हैं।"[80]

6.8 इसी प्रकार से, मोहम्मद ईकबाल खाण्डेय बनाम अब्दुल मजीद रथर, एआईआर 1994 एससी 2252 के मामले में अदालत ने कहा कि अपीलकर्ता के सामने अदालत के आदेश का पालन करने में वास्तविक कठिनाईयां हैं, अदालत के द्वारा दिये गये आदेश एवं दिशा निर्देशों का पालन करना वास्तविक परिस्थितियों में व्यवहार्य नहीं है। इस प्रकार के आदेशों का पालन

अवमानना के कानून के तहत करवाना न्यायिक प्रक्रिया और न्यायिक शक्तियों में विश्वास को ठेस पहुचाने के समान है। अदालत को हमेशा अपनी गरिमा और सम्मान के लिये सजग रहना चाहिए परन्तु साथ ही यह सलाह देना भी गलत होगा कि वह अपने अव्यवहार्य आदेशों की अनुपालना करवाऐ।

ग. यदि शर्तों के हिसाब से आदेश अस्पष्ट हो।

6.9 किसी भी ऐसे आदेश की गैर अनुपालना जिसको लागू करने की शर्तें अस्पष्ट हों और अनुपालना में कठिनाईयां हो, तो ऐसे आदेशों के संबंध में अवमानना के कानून के तहत कार्रवाई नहीं की जाएगी। द्रव्या फाईनेन्स प्राईवेट लिमटेड एवं अन्य बनाम एस.के.रॉय एवं अन्य, (2017) 1 एससीसी 75 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने एक अवमानना याचिका को अन्तिम आदेश में स्पष्ट गलती के आधार पर सीमित समीक्षा याचिका मानते हुए बन्द कर दिया क्योंकि अन्तिम आदेश में ब्याज की रकम की गणना एवं भुगतान किस तारिख से करनी है के बारे में कोई भी जानकारी नहीं दी गई थी।

6.10 झारेश्वर प्रसाद पॉल एवं अन्य बनाम तारक नाथ गांगुली एवं अन्य, एआईआर 2002 एससी 2215 के मामले में अदालतें अवमानना के संबंध में जिन शक्तियों का उपयोग करती है वे पार्टियों के मध्य विवाद को सुनिश्चित करने के लिये मूल या अपीलीय अदालत की तरह कार्य नहीं करती हैं। और यदि किसी भी निर्णय या आदेश में कोई गलती या अस्पष्टता है तो दोनो पार्टियों को मामले का निस्तारण करने वाली अदालत में जाकर स्पष्टता प्राप्त करने, आदेश में स्पष्टीकरण के लिए निदेशित करना अच्छा होगा न कि वे अदालतों का समय अवमानना की शक्तियों का उपयोग करने में बर्बाद करवाऐं। अदालत की अवमानना के संबंध में सजा देने वाली शक्ति अदालत की एक विशेष शक्ति है और इसका उपयोग सावधानी से किया जाना चाहिए; इसका उपयोग संयम के साथ इस बात का ध्यान रखते हुए किया जाना चाहिए कि इस के तहत की गई कार्रवाई का अवमाननाकर्ता पर क्या प्रभाव होगा।[81]

80 कैप्टन दुष्यंत सोमल बनाम श्रीमती सुष्मा सोमल एवं अन्य, एआईआर, 1981 एससी 1026

81 द्रव्या फाईनेन्स प्राईवेट लिमटेड बनाम एस.के. रॉय, (2017) 1 एससीसी 75 को भी देखें।

घ. तकनीकि अवमानना

6.11 अवमानना की कार्यवाही को बहुत ही सोच समझकर और बहुत सावधानी पूर्वक शुरु करने पर जोर देते हुऐ अदालत ने कई अवसरों पर केवल तकनीकी अवमानना और न्यायिक प्रक्रिया को बाधित और हस्तक्षेप करने वाली अवमानना में विभेद किया है। पी.सी.सेन, एआईआर 1970 एससी 1821 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि केवल तकनीकि अवमानना के मामलों में कोई भी अदालत अवमानना के तहत कार्यवाही शुरु नहीं करेगी।

6.12 आगे, मुर्रे एवं कम्पनी बनाम अशोक कुमार नेवतिया, एआईआर 2000 एससी 833 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने 1971 के अधिनियम की धारा 13 के तहत न्यायालय की व्यवस्थित प्रक्रिया में पर्याप्त हस्तक्षेप की पूर्वस्थिति को रेखांकित करते हुए कहा "किसी भी अवमानना के मामले में सिर्फ यही आवश्यक नहीं है कि उसमें तकनीकी अवमानना की गई है बल्कि इस बात के प्रमाण भी होना आवश्यक है कि न्याय की व्यवस्थित प्रक्रिया में हस्तक्षेप किया गया है तथा हस्तक्षेप न्यायिक प्रशासन की प्रक्रिया में व्यवधान के समतुल्य है"। अवमानना के मामले में दण्डित करने के लिए आवश्यक है कि ऐसे मामलों में न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप के पुख्ता सबूत होने चाहिए।

अध्याय -7

निष्कर्ष एवं अनुशंसाएं

7.1 उच्चतम न्यायाालय ने हाल ही में अदालतों की अवमानना के संबंध में संबंधित उच्च न्यायालयों पर एक रिपोर्ट जारी की है। रिपोर्ट का सार (जिसे अनुलग्नक 1 पर देखा जा सकता है) यह बताता है कि पूरे देश के उच्च न्यायालयों में 1 जुलाई 2016 से 30 जून 2017 तक कुल 568 आपराधिक अवमानना एवं 96,310 दीवानी अवमानना के केस लम्बित हैं। आपराधिक अवमानना के सबसे अधिक 104 केस उडीसा उच्च न्यायालय में लम्बित हैं एवं दीवानी मामलों में सबसे अधिक अवमानना के 25,730 केस इलाहबाद उच्च न्यायालय में लम्बित हैं।

7.2 जहां तक उच्चतम न्यायालय का संबंध है 10 अप्रेल, 2018 तक कुल 683 दीवानी एवं 15 आपराधिक अवमानना के केस लम्बित हैं। (कृपया अनुलग्नक 2 देखिए)

7.3 इस प्रकार के दीवानी एवं आपराधिक अवमानना के केस यह बताते हैं कि न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने की घटनाओं में काफी बढोत्तरी हुई है। इनमें जानबूझकर अदालती निर्णयों/ आदेशों का उल्लघंन करने के साथ साथ अन्य माध्यमों के द्वारा न्यायपालिका की गरिमा एवं सम्मान के साथ खिलवाड करना जैसे अदालत को प्रभावित करना इत्यादि की घटनाएं शामिल है। सामान्य तौर पर, यह संख्या अवमाननाकर्ताओं की न्यायिक प्रशासन में हस्तक्षेप और न्यायपालिका के संबंध में अपमानजनक व्यवहार एवं सोच का परिचायक है जो कि किसी भी स्थिति में स्वीकार्य नहीं हो सकता है। पूर्व के अध्यायों में चर्चा एवं ऊपर वर्णित संख्याओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आपराधिक अवमानना के मामले नियमित रुप से न्यायपालिका के कार्य में व्यवधान उत्पन्न करेंगे और 1971 के अधिनियम की प्रावधान हमेशा प्रासंगिक रहेंगे।

82 "भारतीय न्यायपालिका", वार्षिक िरिपोर्ट 2016-17, भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रकाशित।

7.4 उपरोक्त आंकडों के आधार पर जब भारत की तुलना यूनाईटेड किंगडम के साथ की जाती है तो एक विरोधाभाषी निष्कर्ष निकलकर सामने आता है। 2013 में उन्होंने अपने देश के कानून में "अदालत को प्रभावित करने" के अपराध को आपराधिक अवमानना की श्रेणी में से हटा दिया। एकत्रित की जा सकने वाले विभिन्न आंकडों एवं सूचित की गई घटनाओं और पहलुओं के आधार पर स्पष्ट रुप से इस प्रकार की परिस्थितियों में विभेद किया जा सकता है और इस प्रकार से ऐसी दो परिस्थितियों का बिना जांचे परखे तुलना करना शायद उचित नहीं हो सकता है। 19वीं शताब्दी के अन्त तक आते आते इंग्लैण्ड और वेल्स में इस कानून को समाप्त करने से पहले यह कानून लगभग प्रचलन से बाहर हो गया था और इसका उपयोग 20वीं शताब्दी में सिर्फ दो बार किया गया था और अन्तिम बार बहुत पहले 1931 में किया गया था।[83] इसलिये अप्रचलन के सिद्दांत के आधार पर अदालत को प्रभावित करने का कानून का लम्बे समय तक उपयोग नहीं किये जाने के कारण अनुपयोगि और महत्वहीन हो गया।

7.5 भारत में दूसरी ओर आपराधिक अवमानना के निस्तारित और लंबित केसों की संख्या कुछ अलग ही तस्वीर प्रस्तुत करती है। जबकि यूनाइटेड किंगडम के कानून में अदालत को प्रभावित करने के शब्द को मिटाने के पश्चात भी स्थिति में कोई परिवर्तन देखने को नहीं मिला। साथ ही इस तरह के मामलों में सजा देने के लिए उन्होंने अपने अन्य प्रचलित कानूनों जैसे द पब्लिक ऑर्डर एक्ट, 1986 और कम्यूनिकेशन एक्ट, 2003 उपयोग किया; भारत के कानून में अपराधिक अवमानना को यदि 1971 के अधिनियम से हटा दिया जाए तो इस से स्पष्ट विधायी और कानूनी अन्तर पैदा हो जाएगा।

7.6 संविधान के तहत अवमानना के संबंध में अनुच्छेद 129 और 215 के तहत उच्चतर अदालतों को उनके अवमानना के लिए दण्डित करने की शक्तियां दी गई हैं। इसलिये, यहां तक कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की प्रक्रियात्मक शक्तियों के कानून के अभाव में भी ये अदालतें अपनी अवमानना के संबंध में जांच करने और सजा देने के लिये संविधान के उक्त अनुच्छेदों के तहत स्वतंत्र हैं। साथ ही अनुच्छेद 142 (2) के तहत उच्चतम न्यायालय को अपनी अवमानना के मामले में किसी भी व्यक्ति के विरुद्द जांच करवाने और सजा देने की शक्तियां प्राप्त हैं। इस प्रकार "आपराधिक अवमानना" के साथ "अदालत को प्रभावित करने" के प्रावधानों को हटा देने से उच्चतर अदालतों की अवमानना (आपराधिक अवमानना सहित) के मामलों में दण्डित करने की शक्तियों पर उनको संविधान द्वारा प्राप्त प्राकृतिक शक्तियों के कारण कोई भी नकारात्मक प्रभाव नहीं पडेगा क्योंकि ये शक्तियां वैधानिक प्रावधानों के तहत स्वतंत्र हैं।

7.7 इस प्रकार 1971 का अधिनियम अवमानना के लिए सजा देने की शक्ति का स्त्रोत नहीं है बल्कि यह एक प्रक्रियात्मक कानून है जो कि इस तरह की शक्तियों के प्रवर्तन और विनियम

के लिए दिशानिर्देश प्रदान करता है। इसके पीछे का कारण यह है कि 1926 के अधिनियम की शुरुआत से पहले भी इस प्रकार की शक्तियों का उपयोग उच्चतर अदालतें करती रही है। इस प्रकार उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय की अवमानना के मामले में दंडित करने की शक्तियां 1971 के अधिनियम से अलग एवं स्वतंत्र हैं और इस प्रकार इसमें किसी प्रकार का संशोधन करने से अनुच्छेद 129 और 215 के तहत अवमानना के मामले में दंडित करने की शक्तियों पर किसी भी प्रकार का नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ेगा।

7.8 संघीय सूची की सातवीं अनुसूची की 77वीं प्रविष्ठी संसद को अन्य बातों के साथ साथ "उच्चतम न्यायालय के न्याय क्षेत्र और अवमानना सहित शक्तियों ....." कानून बनाने का अधिकार देता है। अवमानना के संबंध में इस शक्ति के बारे में उच्चतम न्यायालय के द्वारा कई विभिन्न मामलों में इसकी परिभाषा और अवमानना कार्यवाहियों के दौरान अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के बारे में व्याख्या की गई है। दूसरे शब्दों में उच्चतर अदालतों को संविधान के द्वारा प्रदत्त की गई शक्तियों को किसी भी अन्य कानून के द्वारा बांधा नहीं जा सकता है। जैसा कि कई अवसरों पर उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 129 और 215 की सुचिता के बारे में बताया गया है। अधिनियम में किसी भी प्रकार का संशोधन जो कि उक्त अनुच्छेदों के विरुद्ध हो अवांछनीय है।

7.9 जैसा कि पाकिस्तान के मामले में देखा गया है कि पाकिस्तान के उच्चतम न्यायालय के द्वारा अदालत की अवमानना अधिनियम 2012 को असंवैधानिक घोषित कर दिया गया था क्योंकि यह न्याय तक सबकी पहुंच में बाधक था और "अदालत को प्रभावित करने" के स्थान पर "किसी जज को उसके कार्यालय के संबंध में प्रभावित करने" जैसे पदों का उपयोग किया गया था। अदालत ने यह महसूस किया कि 2012 का अधिनियम संविधान की मूल भावना के खिलाफ है।

7.10 इस संबंध में बनाए गए कानूनों पर एक निगाह वापस डालने के बाद यह पता चलता है कि 1971 का अधिनियम अवमानना के संबंध में शक्तियों और प्रक्रियाओं को विनयमित करने के उद्देश्य से बनाया गया था और वास्तव में यह इस प्रकार की शक्तियों को सीमित करता है तथा ऐसे मामलों में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया को भी निर्धारित करता है। 1971 के अधिनियम में दीवानी और आपराधिक अवमानना की परिभाषाओं को निर्धारित किया गया है तथा साथ ही साथ धारा 3 और 13 के तहत यह भी बताया गया है कि कौन कौन से कृत्य आपराधिक अवमानना में शामिल हैं तथा कौन-कौन से नहीं। इसी प्रकार से धारा 14 एवं 15 इत्यादि आपराधिक अवमानना के मामले में प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं को निर्धारित करती हैं। इस प्रकार 1971 के अधिनियम में वे प्रावधान भी किये गए हैं जो की यह बताते हैं कि कौन कौन से कृत्य आपराधिक अवमानना की श्रेणी में नहीं आते हैं । इस अधिनियम की धारा

22 में इन शक्तियों के दुरुपयोग को रोकने के लिए परिभाषित भी किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि 1971 का अधिनियम न्यायिक प्रक्रिया के अपने उद्देश्य में पिछले 5 दशकों से सफल हुआ है जिसके बारे पूर्व के अध्यायों में चर्चा की गई है।

7.11 "अवमानना" शब्द को "जानबूझकर अदालत के दिशा निर्देशों/ निर्णयों का उल्लंघन" मे संसोधित करने से अवमानना शब्द की प्रभावी रूप से व्याख्या की जा सकती है और अदालत की अवमानना को 1971 के अधिनियम के तहत दी गई परिभाषा के अनुरूप उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार के सीमित प्रावधान उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की अपने अवमानना के मामलों में दण्डित करने की शक्तियां प्रभावित नहीं होंगी। परन्तु इस से अधीनस्थ अदालतों में अवमानना के अनसुलझे मामलों में बढोत्तरी अवश्य होगी; विशेषकर "अदालतों को प्रभावित करने" के संबंध में क्योंकि धारा 10 का क्षेत्र बहुत ही संकीर्ण है जो कि उच्चतम न्यायालय को अधीनस्थ अदालतों की अवमानना के संबंध में सजा देने की शक्तियां प्रदान करता है।

7.12 यदि 1971 के अधिनियम में कोई भी संशोधन किया जाता है तो इससे "अवमानना" की परिभाषा पर भी प्रभाव पडेगा जिससे कि इसके अर्थ में अस्पष्टता एवं अनेकार्थता आएगी क्योंकि प्राकृतिक रूप से और विभिन्न अवसरों पर परिभाषाएं और व्याख्याएं की जाऐंगी जिनका उपयोग अभी उच्चतर अदालतें अपनी अवमानना के मामलों में दण्डित करने के लिये प्राकृतिक शक्ति के रूप में करती हैं। स्थिरता और एकरूपता के लिए यह सुझाव दिया जाता है कि वर्तमान में प्रचलित परिभाषाओं को ही जारी रखा जाए जो कि न्याय की कसौटियों पर अभी तक खरी उतरती आई हैं।

7.13 इससे आगे, 'अवमानना' के क्षेत्र में कटौती कर इसे सिर्फ 'अदालत के आदेशों / निर्णयों का जानबूझकर उल्लंघन करने' तक सीमित करना भी अवांछनीय प्रतीत होता है क्योंकि अवज्ञाकारी तत्वों के निवारण के लिए इनकी हमेशा आवश्यकता रहेगी। यदि प्रावधानों के क्षेत्रों को बहुत ही संकीर्ण कर दिया जाएगा तो यह प्रभावकारी नहीं होगा। अवमानना के कानून में इस प्रकार की कटौती या परिवर्तन करने से अदालत के सम्मान, डर, शक्तियों, क्रियाकलापों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा; और इस बात की भी पूर्ण संभावना है कि इससे जानबूझकर इनकार करने के और अदालतों की निंदा के उदाहरणों में वृद्धि होगी।

7.14 यहां पर यह भी ध्यान देने योग्य बिन्दु है कि सबसे पहले 'अवमानना' की परिभाषा को 1971 के अधिनियम में ही निर्धारित किया गया था जबकि इस प्रकार की कोई परिभाषा पूर्व के अधिनियमों में निर्धारित नहीं की गई थी। यह केवल 1971 का ही अधिनियम था जिसमें ना केवल 'अवमानना' शब्द को परिभाषित किया बल्कि 'अवमानना' को भी दो भागों में वर्गीकृत

कर 'दीवानी अवमानना' और 'आपराधिक अवमानना' में परिभाषित कर दोनों के लिए संक्षिप्त परिभाषाएं भी प्रदान की। 1971 के अधिनियम के 'उद्देश्य एवं कारणों' से यह स्पष्ट होता है कि उससे पूर्व बने कानूनों को **"अनिश्चित एवं अपरिभाषित"**..... पाया गया। इन परिभाषाओं को रद्द करने का निर्णय हम सभी को पूर्व की अनिश्चितताओं की ओर ले जाएगा और 1971 से लेकर आज तक इस क्षेत्र में की गई अत्यधिक प्रगति को खत्म कर देगा।

7.15 विधि आयोग को भारत सरकार से जो संदर्भ प्राप्त हुआ था वह 1971 के अधिनियम की धारा 2 (क) के लिए था। समय की आवश्यकता के अनुरूप उक्त अधिनियम को दो बार संशोधित किया गया है पहली बार 1976 में तथा दूसरी बार 2006 में। ऊपर वर्णित अध्ययनों में निष्कर्ष के आधार पर धारा 2 (क) में सुझाया गया संशोधन अर्थपूर्ण नहीं होगा और ना ही यह जनहित में होगा. जहां तक न्यायिक प्रशासन में निर्लज्ज परिवादियों और वकीलों की मिलीभगत का प्रश्न है यह परिवादियों और आम जन के हित में नहीं होगा की अवमानना की शक्तियों के प्रभाव को कम किया जाए क्योंकि इनके उपयोग करने की आवश्यकता कभी भी हो सकती है। इसीलिए आयोग वर्तमान में इस अधिनियम में किसी भी प्रकार के संशोधन की आवश्यकता को महसूस नहीं करता है

तदनुसार आयोग अनुशंसाएं करता है।

न्यायमूर्ति डॉ. बी.एस. चौहान
अध्यक्ष

न्यायमूर्ति रवि आर त्रिपाठी, सदस्य	प्रो.(डॉ)एस.शिवकुमार सदस्य	डॉ संजय सिंह सदस्य सचिव

सुरेश चंद्र पदेन सदस्य	डॉ. जी. नारायण राजू पदेन सदस्य

अनुलग्नक-1

अवमानना (दीवानी एवं आपराधिक अवमानना) के कुल मामलों का विवरण (1.07.2016 से 30.06.2017 तक [84])

उच्च न्यायालय/पीठ का नाम	अवमानना की श्रेणी	1.07.2016 तक लम्बित	संस्थानिक	निपटाए गये मामले	30.06.2017 तक लम्बित
इलाहबाद	दीवानी	29992	831229	12951	25370
	आपराधिक	93	34	34	93
बॉम्बे	दीवानी	5025	1744	1788	4981
	आपराधिक	58	22	16	64
कलकत्ता	दीवानी	5422	343	318	5447
	आपराधिक	82	12	08	86
छत्तीसगढ	दीवानी	341	681	731	291
	आपराधिक	04	02	0	06
दिल्ली	दीवानी	1679	1125	1619	1185
	आपराधिक	20	06	08	18
गुवाहाटी	दीवानी	1069	629	876	822
	आपराधिक	-	-	-	-
कोहिमा पीठ	दीवानी	25	14	25	14
	आपराधिक	02	-	-	02
आईजोल पीठ	दीवानी	24	22	34	12
	आपराधिक	-	-	-	-
ईटानगर पीठ	दीवानी	40	38	30	48
	आपराधिक	-	-	-	-
गुजरात	दीवानी	142	242	240	144
	आपराधिक	0	0	0	0
हिमाचल प्रदेश	दीवानी	226	384	436	174
	आपराधिक	01	01	02	0
हैदराबाद	दीवानी	6036	3257	1391	7902
	आपराधिक	0	-	-	-

जम्मू एवं कश्मीर	दीवानी	6355	1431	914	6872
	आपराधिक	17	03	04	16
झारखण्ड	दीवानी	1287	1030	1173	1144
	आपराधिक	22	05	02	25
कर्नाटक	दीवानी	774	2457	1994	1237
	आपराधिक	44	15	15	44
केरला	दीवानी	2091	2333	1696	2728
	आपराधिक	02	06	01	07
मध्य प्रदेश	दीवानी	8087	4844	4674	8257
	आपराधिक	31	12	18	25
मद्रास	दीवानी	6293	4479	3989	6783
	आपराधिक	00	00	00	00
मणीपुर	दीवानी	520	237	169	588
	आपराधिक	04	01	0	05
मेघालय	दीवानी	18	26	26	18
	आपराधिक	01	0	0	01
ओडिसा	दीवानी	10189	1823	4039	7973
	आपराधिक	131	04	31	104
पटना	दीवानी	6341	1344	2969	4716
	आपराधिक	0	00	0	0
पंजाब एवं हरियाणा	दीवानी	4273	3513	3455	4331
	आपराधिक	44	15	11	48
राजस्थान	दीवानी	3741	3508	2679	4570
	आपराधिक	26	04	07	23
सिक्किम	दीवानी	0	01	0	01
	आपराधिक	0	0	0	0
त्रिपुरा	दीवानी	12	67	46	33
	आपराधिक	03	01	03	01
उत्तराखण्ड	दीवानी	491	361	183	669
	आपराधिक	0	-	-	0

84 भारतीय उच्चतम न्यायालय द्वारा भारतीय न्यायपालिका की वर्ष 2016-17 की प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट,

अनुलग्नक-2

भारतीय उच्चतम न्यायालय

दिनांक 10.04.2017 तक अदालतों की दीवानी और आपराधिक अवमानना के कुल स्थापित, निपटाए और लम्बित मामलों का विवरण

क्रम संख्या	अवधी	केस का प्रकार	दीवानी		10.04.2018 तक लम्बित	आपराधिक		10.04.2018 तक लम्बित
01.	01.01.2017 से 31.12.2017 तक	अवमानना याचिका	स्थापित	निस्तारित		स्थापित	निस्तारित	
			535	606	680	4	5	13
02.		स्वतं संज्ञानित याचिकाएं	7	4	3	5	5	2
		कुल	542	610	**683**	9	10	**15**
					683			
दिनांक 10.04.2018 तक कुल लम्बित केस								**698**

केसों की सूची

एमलिंगम बनाम *वी.वी. महालिंगा नादर*, एआईआर 1966, 21

महाधिवक्ता, बिहार राज्य बनाम *मैसर्स मध्य प्रदेश खैर इंडस्ट्रीज*, एआईआर 1980 एससी 946

अफजल एवं अन्य बनाम *हरियाणा राज्य एवं अन्य,* 1994 (1) एससीसी 425

अखिल भारतीय अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कझागम बनाम *एल.के त्रिपाठी एवं अन्य*, एआईआर 200 एससी 1314

अमित चंचल झा बनाम रजिस्ट्रार, उच्च न्यायालय दिल्ली, (2015) 13 एससीसी 288

आंद्रे पॉल टेरेंस एम्बार्ड बनाम - *त्रिनिदाद टोबेगो के अटॉर्नी जनरल* एआईआर 1936 पीसी 141

अनिल रतन सरकार और अन्य बनाम हिरक घोष और अन्य, एआईआर 2002 एससी 1405

अरुण कुमार यादव बनाम *जिला न्यायाधीश के माध्यम से उत्तर प्रदेश राज्य*, (2013) 14 एससीसी 127

अरुण पासवान, उपनिरिक्षक बनाम *बिहार राज्य एवं अन्य*, एआईआर 2004 एससी 721

अशोक कुमार अग्रवाल बनाम *नीरज कुमार और अन्य* (2014) 3 एससीसी 602

अश्विनी कुमार घोष और अन्य बनाम अरबिंदा बोस एवं अन्य, एआईआर 1953 एससी 75

बी.के. कार बनाम *मुख्य न्यायाधीश और उनके साथी न्यायाधीश, उड़ीसा उच्च न्यायालय और अन्य*, एआईआर 1961 एससी 1367

बाबूभाई भीमाबाई बोखरिया बनाम *गुजरात राज्य*, एआईआर 2013 एससी 3648

बाल ठाकरे बनाम हरीश पिंपलखूट एवं अन्य, एआईआर 2005 एससी 396

बैंक ऑफ इंडिया बनाम *विजय परिवहन और अन्य,* (2000) 8 एससीसी 512

बर्दाकांत मिश्रा बनाम *भीमसेन दीक्षित*, एआईआर 1972 एससी 2466

बर्दाकांत मिश्रा बनाम *रजिस्ट्रार, उड़ीसा उच्च न्यायालय*, एआईआर 1974 एससी 710

बाज़ मोहम्मद काकर और अन्य बनाम *फेडरेशन ऑफ पाकिस्तान इत्यादि इत्यादि इत्यादि,* पाकिस्तान के सुप्रीम कोर्ट, 3 अगस्त, 2012 को संविधान में 2012 की याचिका संख्या 77 में दिये गये निर्णय आदि इत्यादि।

बिहार फाइनेंस सर्विस एच.सी. सहकारी समाज लिमिटेड बनाम गौतम गोस्वामी एवं अन्य, एआईआर 2008 एससी 1975

सी.के दफ्तरी बनाम *ओ.पी. गुप्ता एवं अन्य*, एआईआर 1971 एससी 1132

सी. रविचंद्रन अय्यर बनाम *न्यायमूर्ति ए.एम. भट्टाचार्य और अन्य*, (1995) 5 एससीसी 457

कैप्टन दुष्यंत सोमाल बनाम *श्रीमती सुषमा सोमाल और अन्य*, एआईआर 1981 एससी 1026

कार्टवाइट का मामला , 114 मास 230

चाडविक बनाम *जेनेका* (3डी परि 2002)

चंद्र शशि बनाम *अनिल कुमार वर्मा*, (1995) 1 एससीसी 421

चेतक कंस्ट्रक्शन लिमिटेड मैसर्स बनाम *ओम प्रकाश और अन्य,* एआईआर 1998 एससी 1855

छोटू राम बनाम *उर्वशी गुलाटी और अन्य*, एआईआर 2001 एससी 3468

क्रेग बनाम *हर्नी*, 331 यूएस 367 (1947)

दरोगा सिंह और अन्य बनाम *बी.के पांडे,* एआईआर 2004 एससी 2579

दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम *स्कीपर कन्सट्रक्सन कम्पनी (प्राइवेट) लिमिटेड और अन्य*, एआईआर 1996 एससी 2005

दिल्ली न्यायिक सेवा संघ, तीस हजारी कोर्ट, दिल्ली बनाम *गुजरात राज्य*, एआईआर 1991 एससी 2176

दिल्ली न्यायिक सेवा संघ बनाम *भारतीय संघ*, (1998) 2 एससीसी 369

धनंजय शर्मा बनाम *हरियाणा राज्य और अन्य,* एआईआर 1995 एससी 1795

दिनेश कुमार गुप्ता बनाम *यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य*, (2010) 12 एससीसी 770

डॉ. डी.सी सक्सेना बनाम *माननीय भारत के मुख्य न्यायाधीश*, एआईआर 1996 एससी 2481

द्रव्या फाइनेंस प्रा. लिमिटेड और अन्य बनाम *एस.के रॉय एवं अन्य*, (2017) 1 एससीसी 75

ई.एम. शंकरन नंबूद्रिपाद बनाम टी. नारायणन नाम्बियार, एआईआर 1970 एससी 2015

पूर्व भाग रॉबिन्सन, 19 वॉल. 505

गिल्बर्ट अहनी बनाम *लोक अभियोजन निदेशक,* [1999] 2 एसी 294

गोबिंद राम बनाम *महाराष्ट्र राज्य* , एआईआर 1972 एससी 989

हरि सिंह नागरा और अन्य बनाम कपिल सिब्बल एवं अन्य, (2010) 7 एससीसी 502

हेलमोर बनाम *स्मिथ,* (1887) 35 अध्याय घ 449, 455

हेत राम बेनिवाल एवं अन्य बनाम रघुवीर सिंह और अन्य, एआईआर 2016 एससी 4940

रजिस्ट्रार के माध्यम से उच्च न्यायालय, इलाहबाद बनाम *राज किशोर और अन्य* , एआईआर 1997 एससी 1186

परम पावन केशवानंद भारती श्रीपादगल्वरु और अन्य बनाम *केरल राज्य और अन्य*, एआईआर 1973 एससी 1461

हुसैनारा खातून बनाम *गृह सचिव, बिहार राज्य* , एआईआर 1979 एससी 1369

हुसैन और अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, एआईआर 2017 एससी 1362

पुन: अब्दूल और मेहताब, (1867) 8 डब्ल्यू.आर (सीआर) 32

पुन में: अजय कुमार पांडे, एआईआर 1997 एससी 260

पुन: अरुंधती रॉय, एआईआर 2002 एससी 1375

पुन: सी.एस कर्णन, (2017) 2 एससीसी 756

पुन: पी.सी सेन , एआईआर 1970 एससी 1821

पुन: रीड बनाम हन्गोन्सन, (1742) 2 एटीके *पढ़ें* । 469

पुन: एसके सुंदरम, एआईआर 2001 एससी 2374

पुन: संजीव दत्ता, उप सचिव, सूचना और प्रसारण मंत्रालय , (1995) 3 एससीसी 619

पुन: विनय चंद्र मिश्रा, एआईआर 1995 एससी 2348

मुस्लिम आउटलुक, लाहौर, एआईआर 1927 लाहौर 610 के मामले में।

राष्ट्रपति के माध्यम से *आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण* बनाम *वी.के. अग्रवाल एवं अन्य*, एआईआर 1999 एससी 452

जे.आर पराशर, एडवोकेट और अन्य बनाम प्रशांत भूषण, वकील और अन्य, एआईआर 2001 एससी 3395

झारेश्वर प्रसाद पॉल और अन्य बनाम तारक नाथ गांगुली और अन्य, एआईआर 2002 एससी 2215

कल्याणेश्वरी बनाम *भारत संघ एवं अन्य,* (2012) 12 एससीसी 599

कपिलदेयो प्रसाद शाह और *अन्य बनाम बिहार एवं अन्य राज्य,* (1999) 7 एससीसी 569

किशोर चंद बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य*, एआईआर 1990 एससी 2140

कृष्णकांत तमाकार बनाम *मध्य प्रदेश राज्य,* आपराधिक अपील संख्या 2018 के 470 में उच्चतम न्यायालय का निर्णय दिनांक 28 मार्च, 2018

एल.डी जयकवाल बनाम *यूपी राज्य,* एआईआर 1984 एससी 1374

एल.पी मिश्रा बनाम *यूपी राज्य* , एआईआर 1998 एससी 3337

एलआईसी ऑफ इंडिया बनाम *आर.सुरेश* (2008) 11 एससीसी 319

कानूनी अनुस्मारक बनाम *मातीलाल घोस और अन्य* ।, (1914) आईएलआर 41 कैल. 173

लीला डेविड बनाम *महाराष्ट्र राज्य और अन्य,* एआईआर 200 एससी 3272

एम.बी संघी, वकील बनाम पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, एआईआर 1991 एससी 1834

एम.सी मेहता बनाम *भारत संघ* एवं अन्य, एआईआर 2003 एससी 3469

एम.वी.जयराजन बनाम *केरला उच्च न्यायालय* (2015) 4 एससीसी 81

माधव हायाददनराव होस्केट बनाम *महाराष्ट्र राज्य* , एआईआर 1978 एससी 1548

महिपाल सिंह राणा बनाम *यूपी राज्य*, एआईआर 2016 एससी 3302

मार्टिन बनाम लॉरेंस, (1879) आईएलआर 4 कैल 655

मोहन सिंह बनाम *एलआरएस के माध्यम से अमर सिंह,* एआईआर 1999 एससी 482

मोहम्मद इकबाल खंडे बनाम *अब्दुल मजीद रथर*, एआईआर 1994 एससी 2252

मूसा विल्सन एवं अन्य बनाम *कस्तुरिबा और अन्य*, एआईआर 2008 एससी 379

श्रीमतीं जॉय दास और अन्य बनाम *सईद हसीबुर रहमान और अन्य*, एआईआर 2001 एससी 1293

मुरे एंड कम्पनी बनाम *अशोक कुमार नेवतिया और अन्य* एआईआर 2000 एससी 833
मुथु करुप्पन बनाम *परिथी इलमवाजुथी और अन्य* , एआईआर 2011 एससी 1645
कानपुर महानगर पालिका बनाम *मोहन सिंह* (1966) ऑल डब्ल्यू आर 179
पल्लव शेठ बनाम *कस्टोडियन और अन्य*, एआईआर 2001 एससी 2763
पर्स्पेक्टिव पब्लिकेशंस (प्राइवेट) लिमिटेड बनाम *महाराष्ट्र राज्य* , एआईआर 1971 एससी 221
प्रीतम पाल बनाम *मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर* , एआईआर 1992 एससी 904
प्रिया गुप्ता और अन्य बनाम अतिरिक्त सचिव, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय और अन्य, (2013) 11 एससीसी 404
आर.एस. सुजाता बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य, (2011) 5 एससीसी 68 9
आरके गर्ग बनाम *एचपी राज्य,* एआईआर 1 9 81 एससी 1382
आरएल कपूर बनाम *मद्रास राज्य* , एआईआर 1 9 72 एससी 858
राधा मोहन लाल बनाम *राजस्थान उच्च न्यायालय* , एआईआर 2003 एससी 1467
राजेश कुमार सिंह बनाम *उच्च न्यायालय के एमपी,* एआईआर 2007 एससी 2725
राम किशन बनाम *श्री तरुण बजाज एंड ऑर,* (2014) 16 एससीसी 204
राम दयाल मार्करा बनाम *एमपी राज्य*, एआईआर 1 9 78 एससी 921
रवि एस नायक बनाम *संघ और भारत संघ* , एआईआर 1994 एससी 1558
रिलायंस पेट्रोकेमिकल्स लिमिटेड बनाम *इंडियन एक्सप्रेस समाचार पत्र के मालिक, बॉम्बे प्रा लिमिटेड एंड अन्य*, एआईआर 1989 एससी 190
रेक्स बनाम *अल्मन* (1765) विल्मोट्स नोट्स, 243
रुदुल शाह बनाम *बिहार राज्य और अन्य*, एआईआर 1983 एससी 1086
रूस्तम कौसजी कूपर बनाम *यूनियन ऑफ इंडिया,* एआईआर 1970 एससी 1318
एस अब्दुल क्रिम बनाम *एम.के.प्रीकाश,* एआईआर 1976 एससी 859
सहदेव @ सहदेव सिंह बनाम *यूपी* राज्य और अन्य (2010) 3 एससीसी 705
शेन्केक बनाम *संयुक्त राज्य अमेरिका* 249 यूएस 47 (1919)
शकुंतला सहदेव्राम तिवारी (श्रीमती) और अन्य बनाम *हेमचंद एम सिंघानिया,* (1990) 3 बॉम्बे सीआर 82
श्रीमती इंदिरा नेहरू गांधी बनाम श्री राज नारायण और अन्य, एआईआर 1975 एससी 2299
हरियाणा राज्य और अन्य बनाम *भजनलाल और अन्य*, एआईआर 1992 एससी 604
हरियाणा और अन्य राज्य बनाम *भजन लाल और अन्य*, एआईआर 1993 एससी 1348
महाराष्ट्र राज्य बनाम *चंपलाल पुंजजी शाह*, एआईआर 1981 एससी 1675
सुब्रमण्यम स्वामी बनाम *अरुण शौरी,* एआईआर 2014 एससी 3020
सुधीर वासुदेव और अन्य बनाम *एम जॉर्ज रविशेखरन और अन्य,* एआईआर 2014 एससी 950

सुखदेव सिंह सोढ़ी बनाम *मुख्य न्यायाधीश एस तेज सिंह और माननीय पेप्सु उच्च न्यायालय के न्यायाधीश*, एआईआर 1954 एससी 186

सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स ऑन-रिकॉर्ड एसोसिएशन और अन्य बनाम *संघ भारत,* (2016) 5 एससीसी 1

सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम *भारत संघ एवं अन्य*, एआईआर 1998 एससी 1895

टी.एन.गोदावर्मन थिरुमुलपद अमीकस क्यूरी के *माध्यम से* बनाम *अशोक खोट और अन्य,* एआईआर 2006 एससी 2007

तमिलनाड मर्कंटाइल बैंक शेयर धारक कल्याण संघ (7) बनाम *एस.सी. सेकर और अन्य*, (2009) 2 एससीसी 784

क्राउन बनाम *सैय्यद हबीबी,* (1925) आईएलआर 6 लाहौर 528

सचिव,हेलकंडी बार एसोसिएशन बनाम *असम राज्य और अन्य,* एआईआर 1996 एससी 1925

बॉम्बे राज्य बनाम *पी,* एआईआर 1959 बॉम्बे 182

भारत संघ एवं अन्य बनाम अशोक कुमार अग्रवाल, (2013) 16 एससीसी 147

भारत संघ एवं अन्य बनाम *सुबेदार देवसी पीवी*, एआईआर 2006 एससी 909

वी.एम. मनोहर प्रसाद बनाम *रत्नम राजू*, (2004) 13 एससीसी 610

वकील प्रसाद सिंह बनाम *बिहार राज्य*, एआईआर 200 एससी 1822

विश्राम सिंह रघुवंशी बनाम *यूपी राज्य*, एआईआर 2011 एससी 2275

विटुसा ओबेरॉय और अन्य बनाम *कोर्ट का स्वंय का संज्ञान,* एआईआर 2017 एससी 225

विलियम थॉमस शिपिंग कं, पुन: एच.डब्ल्यू. ढिल्लों एंड संस लिमिटेड बनाम *कंपनी, पुन: सर रॉबर्ट थॉमस और अन्य*, [1930] 2 अध्याय 368